महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुखपत्र

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

वर्ष : ६३ **अंक** : १०-१२
दयानन्दाब्द: १९७
विक्रम संवत्: वैशाख-ज्येष्ठ शुक्ल २०७८
कलि संवत्: ५१२२
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,१२२

सम्पादक
डॉ. सुरेन्द्र कुमार

प्रकाशक- परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-मन्त्री, परोपकारिणी सभा
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क
भारत में
एक वर्ष-३०० रु.
पाँच वर्ष-१२०० रु.
आजीवन (१५ वर्ष) -३००० रु.
एक प्रति - १५/- रु.
विदेश में
वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
एक प्रति - ३ पाउण्ड
एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

RNI. No. ३९५९ / ५९

i jki dkjh

मई द्वितीय-जून द्वितीय २०२१

अनुक्रम

०१. क्रान्तिकारी वीर तीन सावरकर भाई	सम्पादकीय	०४
०२. अग्नि सूक्त-०६	डॉ. धर्मवीर	०७
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	१०
०४. दैनिक ब्रह्मचर्य तथा दैनिक संन्यास	पं. चमूपति	१६
०५. शङ्का समाधान-५९	डॉ. वेदपाल	२०
०६. एक नररत्न ओमप्रकाश वर्मा...	राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	२३
०७. श्री ओमप्रकाश वर्मा आर्योपदेशक...	इन्द्रजित् देव	२५
०८. वैदिक पुस्तकालय द्वारा प्रकाशित नया साहित्य		२७
०९. हमारे आचार्य घनश्याम जी	ब्र. प्रताप आर्य	२८
१०. संस्था की ओर से...		३१
११. 'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति		३४

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये।
किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

(सावरकर जयन्ती के उपलक्ष्य में)

क्रान्तिकारी वीर तीन सावरकर भाई

जाने कैसे वीर हृदय थे वे लोग जिनके दिल में देश के लिए बेहद दीवानापन था, अटूट स्वाभिमान था, अडिग संकल्प था, न वे जेल से डरते थे, न कालापानी से घबराते थे, न यातनाओं से भय खाते थे, न ही मौत का डर था; अपितु मौत ही उनसे डरती थी और अंग्रेज भी।

आश्चर्य तो यह जानकर होता है कि कितने ही ऐसे पूरे-के-पूरे परिवार थे जो आजादी के लिए समर्पित थे और जो देश के लिए मर-मिट भी गये। ऐसे ही एक परिवार के तीन क्रान्तिकारी भाई थे- सावरकर बन्धु। बड़े भाई का नाम था गणेश दामोदर सावरकर, मझोले थे विनायक दामोदर सावरकर, तीनों में सबसे छोटे थे नारायण दामोदर सावरकर। इन तीनों का जन्म महाराष्ट्र के नासिक जिले के भगूर गाँव में चितपावन ब्राह्मण दामोदर पन्त सावरकर के घर क्रमशः १८७९, २८ मई १८८३ और १८९९ में हुआ।

मझोले भाई विनायक सावरकर तो घोषित क्रान्तिकारी थे ही, किन्तु बड़े-छोटे दोनों भाई भी अंग्रेजी साम्राज्यवाद के विरुद्ध प्रयासरत थे। उनका सबसे बड़ा अपराध तो यह था कि वे विनायक सावरकर के सगे भाई थे। अंग्रेजी सरकार ने उनको छोटी-छोटी बातों पर जेलों में ठूंस कर भरपूर क्रूर यातनाएँ दीं। अण्डमान की कालापानी (सेल्युलर) जेल में डालकर पशुओं से भी बुरा बर्ताव किया। तिल-तिल करके उनके शरीर को जीर्ण-शीर्ण कर दिया गया। 'मेरा आजीवन कारावास' नामक अपनी पुस्तक में विनायक सावरकर ने अंग्रेजों की उन क्रूर अमानुषिक यातनाओं का विवरण दिया है, जिनको पढ़कर पाठकों की रूह काँप जाती है। आश्चर्य तो इस व्यवहार पर है कि भारतीयों को भरपूर यातनाएँ देकर भी अंग्रेज स्वयं को न्यायप्रिय प्रचारित करने में प्रयासरत रहा करते थे। आइये, प्रथम विनायक सावरकर को दी गई यातनाओं की जानकारी लेते हैं।

विनायक दामोदर सावरकर- अधिकांश राजनीतिक बंदियों को अण्डमान की सेल्युलर (एक के लिए एक कोठरी वाली) जेल, जिसे बोलचाल की भाषा में कालापानी की जेल कहा जाता था, में सड़ने के लिए भेज दिया जाता था। कालापानी वह जेल थी जहाँ क्रान्तिकारी कैदियों के साथ बर्बरता की सारी सीमाओं को निर्दयतापूर्वक लाँघा जाता था। जहाँ न मानवोचित भोजन की व्यवस्था थी, न आवश्यक चिकित्सा की सुविधा थी, न विश्राम की अनुमति थी, न परस्पर बातचीत करने की ही इजाज़त थी। यदि कोई किसी से कुशलक्षेम भी पूछते देख लिया जाता था तो उसको गन्दी-गन्दी गालियाँ मिलतीं, या डण्डे पड़ते, या दोनों ही सजाएँ दी जातीं। कभी-कभी पैरों में बेड़ी डालकर घण्टों खड़ा रखा जाता था। डेविड बेरी वहाँ का जेलर था, अपितु यों कहिये कि मालिक था; एकदम पत्थरहृदय, दयाविहीन, विशेष रूप से हिन्दू विद्वेषी। शेष जमादार और पेटीदार अधिकारी अधिकतर मुसलमान थे, कठोरता में एक से बढ़कर एक।

आजादी के लिए क्रान्ति की अलख जगाने के अपराध में अंग्रेजी सरकार ने विनायक सावरकर को गिरफ्तार कर लिया। उनको ५० वर्ष की सजा सुनाई गई। वह भी उस कालापानी जेल की, जिसका नाम सुनते ही बड़े-बड़े अपराधी भी काँप जाते थे। पहले उन्हें मुम्बई में ठाणे की जेल में उस कोठरी में बन्द कर दिया जहाँ से सीधे अण्डमान की कालापानी जेल में भेज दिया जाता था। चौथे दिन कर्कश आवाज में एक सिपाही का आदेश मिला- ''उठाओ अपना बिछौना और चलो कालापानी।'' पैरों में बेड़ी पहने और तन पर कैदियों वाली बण्डी पहने सावरकर ने सिर पर बिछौना उठाया, कन्धे पर चद्दर रखी, हाथ में बर्तन लिया और अण्डमान जानेवाली बोट में बैठा दिया गया। कालापानी जेल पहुँचने पर तीसरी मंजिल की एक कोठरी में बन्द कर दिया। वे लिखते हैं कि मेरे लिए तीन वार्डरों की तैनाती कर दी जो मुसलमान थे और पक्के चुगलखोर, छंटे हुए, उलट खोपड़ी और क्रूर कलेजेवाले थे।

लन्दन और पेरिस के 'टर्किशी बाथ' का आनन्द ले चुके बैरिस्टर सावरकर को पहले ही दिन कालापानी जेल के काले पानी के 'अण्डमानी बाथ' का कड़वा अनुभव हो गया। नहाने के लिए एक हौद में समुद्र का खारा पानी भर

रखा था। अंजली में भरकर जैसे ही मुंह में लिया सारा मुँह कड़वा हो गया। जो एक दम थूकना पड़ा। ऊपर से पठान जमादार का तीखा आदेश मिला- ''नहाने को तीन कटोरा पानी मिलेगा, उससे अधिक नहीं।'' नहाने के बाद लगा कि न नहाता तो ही अच्छा था।

खाने के लिए सब्जियाँ कैदी लोग बाहर के खेतों से थोक में काटकर बण्डल बनाकर लाते थे और सड़ियल रसोइये बण्डल को बिना छांटे इकट्ठा काट देते थे। सब्जी में घास-पात के साथ कभी-कभी वहाँ पाये जाने वाले छोटे साँप की केंचुली और साँप के टुकड़े भी आ जाते थे। तब कैदियों को उनको निकालकर या उस सब्जी को फेंककर सूखी रोटी पानी के साथ निगलनी पड़ती थी।

एक बार कैदियों ने साँप के टुकड़े दिखाकर जब बेरी जेलर से शिकायत की तो उसने जवाब देते हुए कहा- ''अरे, ऐसे तो सब्जी और स्वादिष्ट बनती है।'' यह बेसिर-पैर का उत्तर सुनकर सभी हिन्दू कैदी चुपचाप लौट आये।

सभी कैदियों को दो कटोरी चावल और दो रोटियाँ गिनकर मिलती थी। अधिकतर चावल अधपके और रोटियाँ कच्ची या जली होती थीं। उनमें भी जमादार और वार्डन भोजन के समय आकर रोटियाँ झपट लेते थे। ऐसे समय कैदी को अधभूखा ही रहना पड़ता था। यदि कैदी उनका प्रतिरोध करते तो उनको बहाना मिलते ही जमादारों के डण्डे खाने पड़ते थे।

विनायक सावरकर को पहले एक महीने नारियल का छिलका कूटने का काम मिला। फिर अन्य राजबन्दियों की तरह कोल्हू खींच कर तेल निकालने का काम दिया गया। सुबह छह बजे से शाम पाँच बजे तक कोल्हू खींच कर तीस पाउण्ड नारियल तेल रोज निकालना अनिवार्य था। जो दिन में पूरा नहीं कर पाता था उसे रात को लगकर पूरा करना पड़ता था। नहीं तो सजा में उस समय का खाना बन्द!

कोल्हू खींचते हुए कैदी पसीने से तर हो जाते थे और साँस फूलने से हाँफने लगते थे। कुछ तो बेसुध होकर कोल्हू की लकड़ी पर ही गिर जाते थे, होश आ जाने पर फिर उनको कोल्हू खींचना पड़ता था। कुछ राजबन्दी तो कठोर काम और बर्बर व्यवहार से तंग आकर और जलील होकर आत्महत्या तक कर लेते थे। सावरकर को भी ऐसी क्रूरतम परिस्थितियों को झेलना पड़ा था। एक बार आत्महत्या कर लेने का विचार मन पर प्रभावी हो गया था। कुछ वर्ष बाद कुपोषित भोजन तथा कठोर काम के कारण शरीर इतना क्षीण हो गया था कि क्षयरोग के लक्षण प्रकट हो गये थे। डाकू, चोर, हत्यारे अपराधियों को आवश्यक नहीं था कि कठोर काम मिले, किन्तु राजबन्दी कैदियों को कठोर काम अवश्य मिलता था। कुछ चतुर कैदी कठोर काम से बचने के लिए किसी बूटी को खा लेते थे जिससे बुखार चढ़ जाता था। कुछ अपने शरीर में घाव बनाकर उसमें किसी बूटी का रस लगा लेते थे जिससे घाव सड़ने लगता था। इस तरह उन्हें अस्पताल में भरती रहने का अवसर मिल जाता था और कुछ दिनों के लिए काम से बच जाते थे। पर काम की पीड़ा की कथा तो अनन्त थी, हर रोज की। भारत माता की स्वतन्त्रता के लिए जीवनभर संघर्ष करनेवाला यह वकील, लेखक, राष्ट्रवादी स्वातन्त्र्यवीर २६ फरवरी १९६६ को भारतमाता के चरणों में सदा के लिए लीन हो गया।

गणेश दामोदर सावरकर - बड़े भाई गणेश सावरकर का इतना अपराध था कि उसने अंग्रेजी सरकार की आलोचना में दस पृष्ठ का एक पत्रक लिखा था। इसी के बदले उसे अंग्रेजी साम्राज्यवाद का विद्रोही अपराधी घोषित करके अण्डमान की कालापानी जेल में भेज दिया गया। वहाँ उसको वे सब यातनाएँ सहनी पड़ रहीं थीं जो छोटे भाई विनायक सावरकर को सहनी पड़ रहीं थीं, जो अपराधियों को भी नहीं सहनी पड़तीं थीं। एक पत्रक लिखना तथाकथित न्यायप्रिय अंग्रेज सरकार की दृष्टि में इतना बड़ा अपराध बन गया था। गणेश सावरकर को भी जेल में तेल निकालने के लिए कोल्हू चलाने का कठोरतम काम दिया गया। विनायक सावरकर लिखते हैं कि बड़े भाई पर होनेवाले अत्याचारों को देख-देख कर मुझे इतनी पीड़ा होती थी कि रोना आता था। उनको आधासीसी के दर्द का रोग हो गया जिसके कारण सिर मानो फटने को आता था। ऐसी हालत में भी उनसे कोल्हू खिंचवाया जाता था। वे सिर में चक्कर आने से लकड़ी पर लुढ़क जाते थे, दर्द से चीत्कार निकल पड़ती थी। उनकी यह दशा देखकर

एक दिन जेल के डॉक्टर का भी दिल पसीज गया। उसने उनको अस्पताल में भर्ती करने की अनुशंसा कर दी। जेलर बारी बाबा को पता चला तो उसने इलाज से रोक दिया और उस डॉक्टर को भी फटकारा। धीरे-धीरे शरीर जीर्ण-शीर्ण हो गया और वे क्षयरोग की चपेट में आ गये। ऐसी दुर्बलता में उनका जीवन बीता। किन्तु उन्होंने अपने लक्ष्य पर न कभी दु:ख प्रकट किया, न हार मानी, न अपने संकल्प से समझौता किया। वे अपने देशसेवा के लक्ष्य पर अडिग बने रहे।

नारायण दामोदर सावरकर- अब सबसे छोटे भाई नारायण सावरकर का कृतज्ञतापूर्वक स्मरण करते हैं। क्रान्तिकारी परिवार मानकर सबसे छोटे नारायण को भी अहमदाबाद में लॉर्ड मिन्टो पर फेंके गये बम के प्रकरण में सन्देह के आधार पर पकड़कर मुम्बई की ठाणे जेल में डाल दिया। उस समय उसकी आयु अठारह वर्ष थी। उस केस में जेल से छूटते ही घर पहुँचकर सोने की तैयारी कर रहे थे कि राजद्रोह और हत्या के एक अन्य केस में पकड़कर जेल में डाल दिया गया। उनको जेल में अमानवीय यातनाएँ और धमकियाँ दी गईं। उन्हें बेड़ियों में जकड़कर रखा जाता और चक्की पीसने का काम दिया जाता। अल्पायु होते हुए भी उसने न अपना दृढ़ निश्चय छोड़ा, न अपने संकल्प से डिगा। अपने छोटे भाई को उसी जेल में अपने सामने कष्टपूर्ण अवस्था में देख कर बड़े भाई के दिल पर क्या बीतती होगी, उस स्थिति का अनुमान लगाना कठिन नहीं है। विनायक उसका बड़ा भाई भी था और पिता-माता के स्थान पर भी था, क्योंकि उनके पिता-माता बचपन में ही चल बसे थे। जिसको अभी पलना-बढ़ना, पढ़ना-लिखना था वह अब खुद ठाणे की जेल में बन्द था और दोनों बड़े भाई अण्डमान की कालापानी वाली जेल में भेजे जा रहे थे। यह थी एक क्रान्तिकारी परिवार की दशा!!!

हमें रोज-रोज यह झूठ पढ़ाया और सुनाया जाता है-

मिल गई आजादी हमें बिना खड्ग बिना ढाल।
साबरमती के सन्त तूने कर दिया कमाल।।

देश को आजाद कराने के लिए जनता और क्रान्तिकारियों ने बहुत बड़ी कीमत चुकायी है। पिता-माताओं ने अपने लालों को लुटाया है, पत्नियों ने अपने सुहाग लुटवाये हैं, बहनों को अपने भाइयों का बलिदान देखना पड़ा था। बच्चों ने अपने अभिभावक खोये हैं।

स्वतन्त्रता सेनानियों को तिल-तिल कर जेलों में सड़ना पड़ा है, सजाएँ सहनी पड़ी हैं, कोल्हू और चक्की में जुतना पड़ा है, गोली-लाठी झेलनी पड़ी हैं, भूखों मरना पड़ा है, पाशवी यातनाएँ झेलनी पड़ी हैं, फाँसी के फन्दों पर लटकना पड़ा है । आजादी की कहानी सिर्फ यातनाओं और बलिदानों की कहानी रही है। हम उन वीरों के शौर्य और कृतज्ञता को भुलाते जा रहे हैं। आजादी कैसे मिल पायी है, पाठक इस लेख को पढ़कर उसका अनुमान लगायें और उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता के साथ नमन करें।

डॉ. सुरेन्द्र कुमार

आवश्यकता

आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय आबूपर्वत (सम्बद्ध महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक हरियाणा) में संस्कृत-साहित्य, हिन्दी, सामाजिक विज्ञान, विज्ञान, गणित आदि विषयों के अध्यापन हेतु अध्यापकों व संरक्षक (वार्डन) की आवश्यकता है। कृपया सेवानिवृत अध्यापक महानुभाव ही सम्पर्क करें। आवास, भोजन, गोदुग्ध की नि:शुल्क व्यवस्था के साथ-साथ समुचित मानदेय भी दिया जाएगा। साधना व सेवा के इच्छुक वानप्रस्थी महानुभाव गुरुकुल के निम्न चलभाष पर सम्पर्क करें। सम्पर्क सूत्र- ९४१४५८९५१०, ८००५९४०९४३

मनुष्यों को चाहिये कि अपने पुरुषार्थ से सुवर्ण आदि धन को इकट्ठा कर घोड़े आदि उत्तम पशुओं को रक्खें क्योंकि जब तक इस सामग्री को नहीं रखते तब तक गृहाश्रमरूपी यज्ञ परिपूर्ण नहीं कर सकते इसलिये सदा पुरुषार्थ से गृहाश्रम की उन्नति करते रहें।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६३

अग्नि सूक्त-०६

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्य

प्रिय पाठक! परोपकारी पिछले कई वर्षों से आपकी सेवा में डॉ. धर्मवीर जी के वेद प्रवचनों को प्रकाशित कर रहा है। गत अंक में मृत्यु सूक्त का अन्तिम व्याख्यान प्रकाशित हुआ। आप सभी ने उक्त सूक्त को उत्सुकतापूर्वक पढ़ा। आप सबकी इस वेद-जिज्ञासा को ध्यान में रखकर शीघ्र ही यह पुस्तक रूप में भी प्रकाशित कर दिया जायेगा। इस अंक (मार्च प्रथम) से ऋग्वेद के प्रथम सूक्त 'अग्निसूक्त' की व्याख्यान माला प्रारम्भ की जा रही है। प्रवचनों को लेखबद्ध करने का कार्य डॉ. धर्मवीर जी की ज्येष्ठ पुत्री श्रीमती सुयशा जी ही कर रही हैं। -सम्पादक

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्।।

हम ऋग्वेद के पहले मन्त्र की चर्चा कर रहे हैं। इसमें दो प्रकार के यज्ञों की चर्चा है- एक चेतन की और एक जड़ की। यदि चेतन-यज्ञ की चर्चा करेंगे तो अग्नि का अर्थ चेतन होगा और इसके सारे विशेषण भी चेतनता से जुड़े होंगे और जड़ की चर्चा करेंगे तब जड़ अग्नि की चर्चा होगी और विशेषण भी उससे जुड़े हुए होंगे।

हमने पीछे देखा था कि दोनों क्यों आवश्यक हैं। एक बात, दो बात, तीन बात एक ही मन्त्र में क्यों? क्योंकि एक मन्त्र इस संसार के समग्र का द्योतक है- भूत का भी, भविष्य का भी, वर्तमान का भी, जड़ का भी, चेतन का भी, ईश्वर का भी, आत्मा का भी। इन सारी परिस्थितियों को जब एक मन्त्र से पढ़ रहे हैं हमें यह विभाग करना पड़ेगा कि हम कौन से यज्ञ की बात करना चाहते हैं? जो जड़ जगत् में चल रहा है उसकी बात करना चाहते हैं या जो चेतन जगत् में चल रहा है, उसकी करना चाहते हैं? हमारा मन्त्र उसी तरह से उन शब्दों का अर्थ देगा। जैसे हमने देखा, **अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्**। वह यज्ञ करनेवाला जो भी होगा वह यज्ञ करेगा तो अग्नि से ही प्रारम्भ करेगा, अग्नि को पहले लेगा। जड़ जगत् में भी अग्नि को ही लेगा, उस अग्नि के जो लाभ होंगे वे इन्हीं विशेषणों से पता लगेंगे।

अग्नि ईड्य है, वह पुरोहित है, जहाँ कुछ भी करना होगा, पहले उसकी आवश्यकता होगी। वह ऐश्वर्यों को धारण करनेवाला है, उसके अन्दर ऐश्वर्यों के उत्पादन की क्षमता है। जो भी काम करोगे, उसमें उसकी आवश्यकता होगी। वह सर्वदा, सब स्थानों पर विद्यमान होगा और उसको हम आगे रखेंगे। वही बात चेतन अग्नि के साथ भी होगी। चेतन में मैं किसको अग्नि के स्थान पर ले रहा हूँ, मेरा अग्नि कौन है? उसके जो विशेषण हैं उनको हमने पीछे के विशेषणों में देखा था कि चेतन में स्तुति करना, उसके गुणों को कहना, उसके सामने कहना या उसके पीछे कहना। जड़ की स्तुति उसके गुणों को जानना, उसके गुणों का कथन करना। जब अग्नि का महत्त्व बताते हैं, अग्नि की व्याख्या करते हैं, तब उसकी स्तुति ही तो कर रहे होते हैं। यदि स्तुति चेतन की होती है तो चेतन को पता होता है कि मेरी स्तुति हो रही है। लेकिन जड़ को पता नहीं होता कि उसकी स्तुति हो रही है। इसलिए हमें जड़ की स्तुति स्तुति नहीं लगती और चेतन की स्तुति स्तुति लगती है, क्योंकि चेतन की स्तुति में दूसरा चेतन भी जुड़ा हुआ लगता है। संसार में हम लोहे की कितनी भी प्रशंसा करें, अग्नि की कितनी भी प्रशंसा करें, उससे उनका क्या? लेकिन उनकी प्रशंसा से हमको जरूर लाभ होता है। हमें यह पता लगता है कि अग्नि में ये ये गुण हैं, यह इसका स्वभाव है, ये इसके लाभ हैं। इसलिये इस मन्त्र से जड़-चेतन दोनों को समझा जा सकता है, दोनों को समझना चाहिये।

पहला कार्य यह है कि जो चाहिये उसको सामने लाओ। जो आप बनाना चाहते हो, उसके बहुत घटक हैं, तो ध्यान किस पर दिया जाता है जो मुख्य है, जिसके बिना काम नहीं होता, इसलिए उसको लाना पड़ता है। मन्त्र

कहता है कि आप इस संसार के यज्ञ को समझना चाहते हो, तो पहले इसका जो अग्नि है, देव है, उसको समझो अर्थात् इस सारे का केन्द्र कौन है? इसको बाँधकर किसने रखा है? इसके अन्दर नियमों का संचालक कौन है? अर्थात् नियन्त्रण कहाँ से हो रहा है? इसका चलना और रुकना किससे हो रहा है? तब हमें पता लगता है कि उसका जो मुख्य संचालक है, वह जो देवता है, उसे अग्नि कहा है। मन्त्र में कहा कि मैं उस अग्नि को पहले जानता हूँ, यदि वह चेतन है तो मैं उसकी स्तुति करके यह बता रहा हूँ कि इस चेतन में यह-यह गुण है। क्योंकि वह चेतन उन गुणों को सिद्ध करता है इसलिए जब भी मैं कोई काम करूँगा तो उसको सबसे पहले लाऊँगा। अर्थात् यदि कोई उद्योग लगाना है, सब कुछ है लेकिन बिजली नहीं है, कोयला नहीं है, ऊर्जा का कोई स्रोत नहीं है तो आप उद्योग नहीं चला सकते हैं, आप प्रकाश पैदा नहीं कर सकते। अतः पहली चीज है ऊर्जा, स्रोत, उत्पादकता, उत्पादक। जब इस संसार को मैं समझना चाहता हूँ तो मैं इस संसार में जो सबसे मुख्य वस्तु है, सबसे पहले उसको समझता हूँ, वह है **पुरोहितम्**। मैं उसको जानता हूँ तो जैसी मेरी काम की स्थिति है, वैसे ही अग्नि को लाता हूँ। मैं हवन करना चाहता हूँ तो पहले पुरोहित को लाता हूँ, उसको सामने बिठाता हूँ, उससे परामर्श करता हूँ, उससे मार्गदर्शन लेता हूँ। तब मेरा अगला यज्ञ का काम चलता है तो अग्नि क्या है? आगे कहता है **यज्ञस्य देवम्** जिसकी हम चर्चा कर रहे थे अर्थात् वह उसकी मुख्य विषय वस्तु है। यह यज्ञ जिसके लिये किया जा रहा है, वह है। उस यज्ञ के करने का जो प्रयोजन अग्नि है। वह परमेश्वर पुरोहित है। वह परमेश्वर इस यज्ञ का अग्नि रूप है। वह **यज्ञस्य देवम्** अर्थात् जब भी कोई काम आप करना चाहते हो, करते हो, उसको बतानेवाला, उसका सिखानेवाला, उसको समझानेवाला वही है। आपके पास व्यक्ति चाहिये, विशेषज्ञ चाहिये। विशेषज्ञ से आप कार्य में विशेषता प्राप्त कर सकते हैं। इसलिये कहा कि जो भी काम करोगे, तो वहाँ पर उसका जो अधिष्ठाता है, उसको आप लाइये, उसके द्वारा ही आप काम करेंगे।

इसमें एक विशेषण है **ऋत्विजम्**। जीवन में जीवन को रखने के लिये, जीवन को जीवन बनाने के लिये, जिसकी आवश्यकता है, वह है **ऋत्विजम्**। अर्थात् हर समय उसकी जरूरत पड़ती हो हर समय हम उसे याद करते हैं, हर समय के लिये उसे अपने पास रखते हैं। इसके लिए यहाँ विशेषण है **ऋत्विजम्**। वह जो अग्नि है जिसे मैं जानता हूँ, जिसकी मैं स्तुति करता हूँ, पहले उसे मैं प्राप्त करता हूँ, सामने रखता हूँ और जब वह मेरे पास रहती है तब मुझे कोई भी यज्ञ सिद्ध करने में परेशानी नहीं है- **यज्ञस्य देवम्**। और वह थोड़े समय के लिये नहीं है, थोड़ी देर के लिये नहीं है, थोड़े काम के लिये नहीं है। अर्थात् यह जो समस्त यज्ञ है, जब तक वह यज्ञ चलेगा तब तक उसकी उपलब्धि चाहिये। जब तक कोई निर्माण चलेगा तो ऊर्जा चाहिये। जब तक कोई जीवन चलेगा, वह चाहिए। वह ऊर्जा **ऋत्विज** है। हर ऋतु में प्रापणीय है, प्राप्तव्य है, प्राप्त करने योग्य है, अर्थात् उसकी आवश्यकता है।

एक विशेषण इसमें दिया है- **होतारम्**। होता सामान्य रूप से आहुति देनेवाले को कहते हैं, लेकिन आहुति लेनेवाले को भी कहते हैं। वो अदन=खाने के अर्थ में भी आता है। लेने के अर्थ में भी आता है। खाना कितनी विशेष क्रिया है आप इसको समझिये। आपने खाया और खाकर खायी हुई वस्तु शरीर से अलग ही रही तो आपने खाया ही कुछ नहीं। आपके खाने के बाद खाया हुआ आपका हो जाता है। भारतीय आयुर्वेदिक चिकित्साशास्त्र में धातुओं का शोधन किया जाता है। किसी को शुद्ध करते हैं तो उसे मूर्च्छित करना कहते हैं, किसी को जारण कहते हैं, मारण कहते हैं, धारण कहते हैं। उदाहरण के लिये समझ सकते हैं कि तेल को जब काम में लेते हैं तो उसको मूर्छित करना चाहिये। अर्थात् वह सजग रहेगा तो उसकी जो क्रियायें हमें अभिलषित नहीं हैं वे भी होंगी। उन क्रियाओं को दूर करने के लिये क्या करना पड़ेगा? उन क्रियाओं को उसमें से हटाना पड़ेगा इसे मूर्च्छित करना कहते हैं। तेल में हल्दी या कोई अन्य चीज डालकर उसको उबालते हैं तो तेल मूर्च्छित होता है। यह प्रक्रिया जब आगे चलती है तो पारे को भी जारण करना, उसको धारण करना, उसको कई तरह के प्रयोगों में बदला जाता है। कोई चीज किसी में मिला दी गयी और मिलाने के

बाद यदि उसका वजन नहीं बढ़ा तब उसे आत्मसात माना जाता है। सामान्य रूप में एक पाव चीज में एक पाव चीज मिला दी गई तो दो पाव हो जायेगी। आप उसे कम ज्यादा नहीं कर सकते, जितना है, उतना रहेगा। लेकिन जब कोई चीज किसी का अंश बन जाती है, उसका रूप बिल्कुल समाप्त हो जाता है, तो फिर उसका वजन नहीं बढ़ सकता। इसके लिये एक उदाहरण है- चिकित्साशास्त्र का मानना है कि जैसे आपने भोजन किया, मान लीजिये कि आपने एक किलो भोजन किया और भोजन से पहले आपने वजन किया और एक किलो भोजन करके वजन किया तो पता चला कि एक किलो वजन और बढ़ गया, लेकिन आप घण्टे भर बाद दोबारा तोल कर देखेंगे कि वजन नहीं बढ़ा है। वह भोजन का वजन अब वहाँ नहीं है, समाप्त हो जाता है। वह कहाँ चला गया? कहते हैं कि वह जीर्ण हो गया, उसके अन्दर गल गया। जब कोई चीज गल जाए या जल जाए, फिर उसका वजन नहीं रहता। उसका वजन कम हो जाता है, नाममात्र का रह जाता है। उसको हम जारण कहते हैं। जारण, मारण, बुभुक्षिकरण, मूर्च्छित, ये बहुत सारी क्रियायें हैं। वैसे ही जब-जब हम कुछ खाते हैं तो वह हमारे में समा जाता है। वह समा जाना परिस्थिति है जब हम एक हो जाते हैं। उसकी हमारी सत्ता अलग-अलग नहीं होती है।

वह अग्नि उस यज्ञ के अन्दर आत्मसात हो जाएगी, सारी चीजें मिलकर एक हो जायेंगी। वैसे ही मेरे अन्दर की अग्नि में भी सब चीजें मिलकर के एक हो जायेंगी, **होतारम्** अर्थात् धारण करनेवाला है।

आगे कहता है **रत्नधातमम्**। दो शब्द हैं- एक **रत्न** है और एक **धा** है। रत्न कहते हैं जो चमकीले पदार्थ हैं, आकर्षक पत्थर हैं, ग्रहण करने योग्य आभूषण हैं, इसलिए रमणीयतम को रत्न कहते हैं। रमणीयतमम् रत्नधातमम्। दूसरा कहा '**धा**' धारण करने को कहते हैं, उसे अपने अन्दर समेटने को कहते हैं, पाने को कहते हैं। यह अग्नि जो है, यदि आप इसको पा लें, इसको अपने नजदीक रख लें, अपने वश में रख लें तो यह **रत्नधातमम्** हो जाएगा। अत्यधिक रत्नों का धारण करनेवाला। अर्थात् यह रत्नों को उत्पन्न करता है। इससे रत्नों का निर्माण होता है। रमणीय जो वस्तुएँ हैं पदार्थ हैं, जिनकी हमें आवश्यकता है वे चीजें हमें इससे मिलती हैं। इसलिये यदि हम कोई चीज चाहते हैं तो संसार में जो कुछ बना है, वह इस ऊर्जा से बना है और हम जो कुछ बनाना चाहते हैं वह भी इस ऊर्जा से बन सकता है। इस ऊर्जा को समझने के लिए हमें ज्ञान के रूप में चेतन ऊर्जा को समझना है, जो चेतनता के अन्दर ऊर्जा है वह एक चेतन को प्राप्त हो सकती है। जड़ ऊर्जा से चेतन के अन्दर ऊर्जा को अधिक पैदा किया जा सकता है, बढ़ाया जा सकता है। चेतन ऊर्जा के साथ रहकर अपने को ऊर्जावान् मानता, बनाता है। इसलिये इस मन्त्र में जो विशेषण दिये गए हैं वे जड़ अग्नि और दोनों ओर घटते हैं। वे भौतिक अग्नि की ओर भी घटते हैं और वे इस भौतिक संसार का जो स्वामी, परमेश्वर है, उसके साथ भी घटते हैं, यदि इसे हम ध्यान में रखें तो हमें यह मन्त्र समझना बहुत आसन हो जाता है। मन्त्र का एक-एक शब्द हमें लगने लगता है कि कैसे जड़ और कैसे चेतन अर्थ देता है। कैसे ईश्वर के अन्दर वे सब गुण घटते हैं, जो एक भौतिक अग्नि में घटते हैं। उस अग्नि को समझने से आप इन सब गुणों को समझ सकते हैं, इन सब विशेषताओं को जान सकते हैं और इनसे वह-वह लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

प्रथम मन्त्र के रूप में, हमें संसार में इसका क्या उपयोग है, यह समझने की आवश्यकता है। एक तो यह समझने की आवश्यकता है कि इस सारे संसार का जो आधारभूत है, उस चेतन अग्नि=परमेश्वर को यदि आपने समझा तो आपका उद्देश्य पूरा हो सकता है और इसी तरह इस जड़ संसार में रचना का आधार जो ऊर्जा का आधार, केन्द्र रूप अग्नि है उसे समझा तो आपको बात समझ में आ सकती है, इसीलिये मन्त्र में ये चार बातें कही गयी हैं।

जब तक सबकी रक्षा करने वाला धार्मिक राजा वा आप्त विद्वान् न हो तब तक विद्या और मोक्ष के साधनों को निर्विघ्नता से पाने के योग्य कोई भी मनुष्य नहीं होता है और न मोक्ष सुख से अधिक कोई सुख है।

महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५२

कुछ तड़प-कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

तो जन्म व्यर्थ गया समझिये- मैं महात्मा हंसराज की सबसे बड़ी देन यह मानता हूँ कि आपने श्री लाला साईंदास जी के मुख से सुना ऋषि-जीवन से जुड़ा प्रसंग आनेवाले पीढ़ियों तक पहुँचा दिया। मैं महात्मा जी की जीवन की सामग्री की खोज में लगा हुआ था। उनके एक व्याख्यान में मुझे यह प्रेरक प्रसंग मिल गया। मैंने इसे पाकर स्वयं को धन्य-धन्य मानकर इसे अगली पीढ़ियों के लिये सुरक्षित करने का सौभाग्य प्राप्त किया। महर्षि दयानन्द लाहौर में ईश्वर की सत्ता तथा उपासना पर व्याख्यान दे रहे थे। तब आपने ''उसी की उपासना करनी योग्य है'' इस पर बल देते हुये जल, स्थल, पेड़, पक्षी, मुर्दों, मर्दों तथा पाषाण-पूजा का युक्ति, तर्क तथा प्रमाणों से बड़ा जोरदार खण्डन करके श्रोताओं को झकझोर कर रख दिया।

लोग सभास्थल से निकलते हुये हुए ईशोपासना पर ऋषि के व्याख्यान पर अपने-अपने ढंग से प्रतिक्रिया देते हुये एक-दूसरे के मनोभावों को बड़े ध्यान से सुन रहे थे। तब ब्रह्मसमाज के एक बड़े नेता ने उस व्याख्यान को सुनकर बड़ी विचित्र प्रतिक्रिया दी, ''**मेरा तो पिछला सारा जन्म और जीवन ही अकारथ गया।**'' लाला जीवन जी इस विचित्र टिप्पणी को सुनकर बोले, ''ऐसा आप किसलिये कह रहे हैं?'' तब उस ब्रह्मसमाजी नेता ने कहा, ''मैंने आज तक ईशोपासना पर लिखते-बोलते हुये इतने जोश से, इतनी निडरता से ईश्वरेतर की पूजा का ऐसा तीव्र खण्डन कभी नहीं किया।''

महात्मा जी वहाँ उस ब्रह्मसमाजी नेता का नाम बताना भूल गये। मैंने तत्कालीन स्रोतों की जाँच करते हुये यह निष्कर्ष निकाला कि यह कथन ''पंजाब ब्रह्मसमाज के प्रधान लाला कांशीराम जी का होना चाहिये।'' कारण, वह बड़े उत्साह से ऋषि को सुना करते थे और उनके अटल ईश्वर-विश्वास, एकेश्वरवाद और मूर्तिपूजा, कब्र-पूजा के खण्डन की प्रशंसा किया करते थे। मैंने ऋषि जी पर उनके कुछ लेख 'प्रकाश' आदि में पढ़े।

मैं समझता हूँ कि आर्यसमाज के जो लोग अण्ड, बण्ड, पाखण्ड के खण्डन से बचते हैं और जिन्होंने कभी वैदिक धर्म पर विरोधियों के प्रहार का उत्तर-प्रत्युत्तर देने का साहस नहीं दिखाया, उन सबका नरजन्म मानो बेकार गया। मैं ऐसे कई भद्रपुरुषों को जानता हूँ जो आर्य साहित्यकारों के साहित्य व नामों की सूचियों व संस्थाओं के मालिक, संचालक तथा सर्वेसर्वा तो बने, परन्तु विरोधियों के उत्तर-प्रत्युत्तर देने का कभी साहस न जुटा पाये।

स्वामी सत्यप्रकाश का स्मरण हो आया- सन् १९८३ में महर्षि की बलिदान शताब्दी पर अजमेर से प्रकाशित स्मारिका के लिये विद्वानों हेतु छपवाई गई विषय-सूची मुझे देते हुये दीनानगर में कहा, ''वैसे तो आप जिस विषय पर चाहें लेख दे सकते हैं, परन्तु मैंने आपके लिये एक विशेष विषय सोचा है। मेरी दृष्टि में आप उसके लिये सर्वाधिक उपयुक्त हैं।'' वह विषय था, ''विरोधियों के उत्तर-प्रत्युत्तर में लिखा गया आर्यसामाजिक साहित्य।'' मैंने सहर्ष स्वामी जी की आज्ञा स्वीकार करके इसी विषय पर लेख भेजा। यह उस ग्रन्थ का सबसे बड़ा लेख था। क्यों जी! सूचियाँ बनानेवाले ऐसे अवसर पर ऐसे विषयों से भागते क्यों हैं?

मुझे भली प्रकार से याद है कि राजस्थान में एक बैठक में भाग लेने के लिये बैठते ही एक तथाकथित नेता ने अपने धन के अभिमान में 'कुछ तड़प कुछ झड़प' स्तम्भ पर कुछ ऐसी टिप्पणी कर दी कि मेरे मन में तत्काल वहाँ से निकल आने का विचार आया। फिर तत्क्षण स्वामी सत्यप्रकाश जी, आचार्य उदयवीर शास्त्री, पूज्य गुरुवर स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी का स्मरण करके वहीं बैठा रहा।

है रीत प्रेमियों की तन-मन निसार करना।
रोना सितम उठाना और उनसे प्यार करना।।

सबने चुप्पी साध ली- कुछ नये-पुराने लेखक अपनी रिसर्च तथा इतिहास के अद्‌भुत ज्ञान की धौंस जमाने के लिये इतिहासपरक विषय लेकर यहाँ-वहाँ से सामग्री उठाकर लेख देते रहते हैं। मैंने भाई परमानन्द जी की 'आपबीती'

पुस्तक का अनुवाद करते हुये दो-तीन प्रश्नों का उत्तर देने की ऐसे इतिहासज्ञ लेखकों से विनम्र प्रार्थना की। प्रश्न कोई बड़े जटिल तो थे नहीं। मैंने केवल प्रमाण ही माँगे यथा-

१. भारतीय जी ने लिखा है भाईजी डी.ए.वी. कॉलेज में अर्थशास्त्र के विद्वान् थे। इसका प्रमाण चाहिये।

२. हुतात्मा भाई बालमुकुन्द का दाहकर्म सरकार ने करवाया अथवा उनके ग्राम में किया गया?

३. क्या भाईजी इतिहासकार और इतिहास-लेखक नहीं थे? आर्यसमाज में ढेरों सम्पादक, पत्र-पत्रिकायें व प्रकाशक हैं। किसी को हाँ अथवा न में मेरे प्रश्नों का उत्तर देने, यश लूटने की न सूझी।

मैंने भाई परमानन्द, लाला खुशहालचन्द जी तथा उसी काल के लन्दन के डेली हेरल्ड पत्र के प्रमाणों से सप्रमाण उत्तर खोज लिये। जिन प्रकाशकों ने यह अनाप-शनाप गप्पें प्रकाशित कीं वे आगे आकर खेद भी प्रकट न कर सके। एक समय था जब आर्यसमाज के उत्सवों पर बड़े जोश से यह हुँकार दी जाती थी-

नगाड़ा धर्म का बजता है आये जिसका जी चाहे।
सदाकत वेद अक़दस आजमाये जिसका जी चाहे।।

अब बाहरवालों के आक्रमणों के उत्तर की बात छोड़िये। ऋषि जीवन तथा आर्यसाहित्य में, इतिहास में बनावट, मिलावट और हटावट करने की मशीनें लगाकर विचार प्रदूषण करनेवालों का मान मर्दन करनेवाले कहाँ हैं?

डॉ. सुरेन्द्र कुमार जी का मार्मिक मौलिक लेख- हरियाणा में एक रोचक कहावत है, '**समुद्र सूखेगा तो फिर भी घुटने-घुटने जल तो रहेगा ही।**' देशभर में रामचन्द्र जी के मन्दिर-निर्माण, मूर्तियों की स्थापना तथा सब समस्याओं का 'जय श्रीराम' से समाधान की लहर देखकर मैंने माननीय डॉ. सुरेन्द्र कुमार जी पर प्रेम का भारी दबाव बनाकर ''**वाल्मीकि के श्रीराम**'' लेखमाला और फिर इस विषय पर 'शुद्ध मनुस्मृति' की कोटि का एक ग्रन्थ लिखने की विनीत विनती की। परोपकारी के अप्रैल द्वितीय के अंक में उसी शैली और उसी कोटि का अपना सम्पादकीय देकर आपने मुझे तृप्त तो कर दिया, परन्तु प्यास भड़का दी है।

यह उत्तम ग्रन्थ पूरा करके इसी वर्ष में छपकर आ जाना चाहिये। आर्यजनता को, साहित्यप्रेमियों को, दानियों को पूरा सहयोग करके इस ग्रन्थ के प्रचार-प्रसार में सोत्साह योगदान करने का यश लेना चाहिये। ग्रन्थ लेखक विद्वान् के पुरुषार्थ परमार्थ को फलीभूत करने के लिये ऋषिभक्तों को कटिबद्ध होकर आगे आना होगा। ग्रन्थ छपकर पड़ा रहे और खपे नहीं, यह आर्यसमाज की निष्क्रियता का प्रमाण होगा। जो लेख डॉ. सुरेन्द्र जी का छपकर आया है, इसका गुण-कीर्तन करने के लिये मेरे पास शब्द नहीं हैं। मैं अभी नहीं, कभी फिर इस पर दिल खोलकर लिखूँगा।

श्रीराम उपासक थे उपास्य नहीं थे। उनकी वेदनिष्ठा, आस्तिकता, यज्ञ-प्रेम, प्राणियों से प्यार, विद्वत्ता, दिनचर्या आदि जीवन के सब पहलुओं पर प्रामाणिक प्रकाश डाला जावे। राम हममें अथवा जगत् में ओतप्रोत नहीं है जैसा कि अन्धविश्वासी वक्ता-प्रवक्ता दूरदर्शन में बोलते रहते हैं। सर्वशक्तिमान् तो केवल भगवान् ही है। रामचन्द्र महाराज ने हनुमान का, लक्ष्मण का और सेना का सहयोग क्यों लिया?

वानर कौन थे? क्या उनकी पूँछ थी? यदि ऐसा ही माना जावे तो वानर स्त्रियों की पूँछवाली मूर्ति क्या कहीं है? हनुमान कैसे गुणी विद्वान् थे, इस पर भी प्रकाश डाल जावे। रामचरितमानस में वेदशास्त्र, सृष्टि-नियम विरुद्ध कथनों का प्रतिवाद तथा उत्तम वचनों की सुन्दर पंक्तियों को उजागर किया जावे। यह ग्रन्थ ऐसा बनना चाहिये कि पौराणिक रामभक्तों का मन भी इसे पढ़ने के लिये ललचा जावे।

आर्यसमाज के इतिहास के लुप्त अध्याय- श्री पं. इन्द्र जी लिखित आर्यसमाज का इतिहास जो दो भागों में कभी छपा था, उसकी अपनी कई उल्लेखनीय विशेषतायें हैं। इसकी कई न्यूनतायें भी हैं जिसका मुख्य कारण तो श्री पण्डितजी ने विस्तार से लिख ही दिया कि देश-विभाजन के कारण श्री पण्डित जी को आर्य मुसाफिर, प्रकाश, आर्यसमाचार आदि पत्रों की फाइलें ही न मिलीं। दूसरा कारण यह भी तो था कि पण्डित जी का एक ही फेफड़ा था। वह देशभर में घूम-घूमकर इतिहास के स्रोत नहीं खोज सकते थे। आर्यसमाज में सभाओं-संस्थाओं ने इस

कार्य का महत्त्व ही न जाना। आर्यसमाज के इतिहास के अधिकांश मूल स्रोत कहीं किसी सभा या व्यक्ति के पास नहीं हैं।

मैंने अपने विद्यार्थी जीवन में सन् १९५० में इन स्रोतों को एक-एक करके खोजना व सुरक्षित करना आरम्भ कर दिया। पण्डित इन्द्र जी जिनकी प्राप्ति न होने का उल्लेख करते हैं, वे सब तथा और भी जो उनके ध्यान में नहीं ये अधिकांश इस समय मेरे पास हैं। मैं सन् २०१५ ई. तक देशभर में घूम-घूम कर इनकी खोज में लगा रहा। बहुत कुछ मैंने श्रीयुत अनिल आर्य तथा परोपकारिणी सभा को भेंट कर दिया, परन्तु फिर भी पर्याप्त ऐसे स्रोत अब भी मेरे पास हैं जो किसी ने देखे तो क्या, सुने तक भी नहीं। श्री डॉ. रामप्रकाश जी ने मुझे कहा-जो माँगो मैं देता हूँ। इनको सुरक्षित करने के लिये बेच दो।

मैंने विनम्रतापूर्वक कहा, ''मैं धन के लोभ से कुछ भी नहीं बेचूँगा। सोच-समझकर जीते जी भेंट करूँगा।'' अब श्री अजय आर्य ने पं. इन्द्र जी के इतिहास का सम्पादन कार्य मुझे सौंपा है। जो कुछ उसमें छूट गया और जो बाद में कुछ कृपालु उपहासकारों ने हटावट, मिलावट व बनावट से आर्यसमाज का इतिहास बिगाड़ा, प्रदूषित कर दिया, वह सब बड़ी शान से सबके सामने आ जावेगा। ऋषि दयानन्द के पुण्य प्रताप से उनके जीवनकाल में सुदूर दक्षिण में आर्यसमाज पहुँच गया। कर्नाटक आर्यसमाज के इतिहास में यह सप्रमाण मैं दे चुका हूँ। अब विस्तार से एक परिशिष्ट में पं. इन्द्र जी लिखित इतिहास में आ जावेगा। ऋषि-जीवन के कई प्रेरक प्रसंग जो जीवन चरित्रों में न आ सके वे भी परिशिष्ट बनाकर दे दिये जावेंगे। जोधपुर में आर्यसमाज ऋषि-जीवन में नहीं था। प्रतापसिंह का अलीमर्दान विषयक कोई संवाद नहीं हुआ था। इस गप्प की सप्रमाण शवपरीक्षा कर दूँगा। ऋषि के विषपान के बलिदान (देह-त्याग) का पूरा वृत्तान्त (Record) केवल मेरे पास है। कोरोना का प्रकोप जाने दो। मैं आर्यसमाज को प्रामाणिक सामग्री से मालामाल कर दूँगा। आर्यसमाज अमृतसर की पहली रिपोर्ट, 'विद्याप्रकाशक' मासिक की फाइल, 'आर्यसमाचार' के दुर्लभ अंक आदि धरती तल पर केवल मेरे पास हैं। ऋषि जीवन की जितनी खोज पं. लेखराम जी ने की, उनके पश्चात् केवल पं. लक्ष्मण जी आर्योपदेशक ने उस स्तर पर नई खोज करके ऋषि - जीवन को समृद्ध किया। लक्ष्मण जी के पश्चात् अब पं. लेखरामजी के इस वंशज को, गुरुवर स्वामी श्री स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के इस शिष्य को ऋषि-जीवन पर अथाह नया प्रकाश (Flood of light) डालने का गौरव मिलेगा। विरोधियों के साहित्य में (जिन्होंने ऋषि दर्शन किये) ऋषि की महिमा का कैसा वर्णन है, यह पं. इन्द्र जी के ग्रन्थ में मैं सप्रमाण जोड़ दूँगा।

सज्जनो! मैं मनपसन्द घटनायें गढ़नेवाला उपहासकार नहीं हूँ, मैं तो प्रखर सत्यवादी पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की कोटि के अद्वितीय इतिहासकार द्वारा दीक्षा देकर ऋषि जीवन की खोज के लिये, इतिहास के सेवा के लिये इस क्षेत्र में उतारा गया एक साधारण सा ऋषिभक्त हूँ।

'सपूत' पोल खोल देगा- सन् १९१३ में लुधियाना के एक नामी लेखक ने 'सपूत' नाम की एक पठनीय इतिहास विषय की पुस्तक प्रकाशित करवाई। इसमें देश के कई बड़े-बड़े प्रसिद्धि प्राप्त व्यक्तियों का जीवन परिचय है। आर्यसमाज के भी कई पूज्य महापुरुषों के जीवन छपे हैं। इसमें जोधपुर के कर्नल प्रतापसिंह पर भी लेख है। ऐसे बड़े लोगों से उनका जीवन परिचय प्राप्त करके ऐसी पुस्तकों में छपा करता है। उसके जीवन-परिचय में ऋषि के जोधपुर जाने का कतई कोई उल्लेख नहीं। न ही कहीं आर्यसमाज पर एक शब्द मिलता है। अंग्रेज-भक्ति, अंग्रेजों के लिये जान की बाज़ी लगाने की घटनायें तो हैं। आर्यसमाज में दिन रात प्रतापसिंह की महिमा पर निब घिसानेवालों की यह लेख पोल खोल रहा है। ऐसे ही 'अवध रिव्यू' पत्रिका में भी उसका जीवन-परिचय ठीक ऐसा ही छपा था। आर्यसमाज के इतिहास में सत्य का प्रकाश करने में यह पुस्तक भी मेरी सहायक होगी। इसके लेखक ने ऐसा तो कहीं भी संकेत नहीं दिया कि उसने लुधियाना में ऋषि-दर्शन किये थे। अनुमान प्रमाण से तो ऐसा ही लगता है कि इस लेखक ने अपने नगर में ऋषि जी के दर्शन अवश्य किये।

यह लहर रुकने न पाय वीरो- कुछ दिन पूर्व हरियाणा के आर्यवीरों की वेद-प्रचार यात्रा मण्डली भक्ति-भाव से,

जोश से स्वतन्त्रता सेनानी आर्यबलिदानी महाराज स्वामी नित्यानन्द के जन्मस्थान को हुँकार भरती हुई गई-

''हम मस्तों में आन मिले कोई हिम्मतवाला रे''

कोरोना काल में ये आर्यवीर चार सौ से ऊपर ग्रामों में अब तक जा चुके हैं। केवल हरियाणा ही नहीं अन्य-अन्य प्रदेशों की प्रचार-यात्रा पर ये बिन बुलाये पहुँच जाते हैं। देशभर में आर्यसमाज में ऐसी उपलब्धि कोई दूसरी सभा प्राप्त नहीं कर सकी। हमें समझ नहीं आता कि मास्टर रामपाल जी को किन शब्दों में बधाई दी जावे। स्वामी नित्यानन्द जी के जन्मस्थान पर एक दिन पहले श्री अमित शास्त्री, श्री जगदीश आर्य तथा श्री नरेन्द्र ने अगले दिन के कार्यक्रम की ग्रामवालों को सूचना दी। पीछे से श्री अभय आर्य भी साथियों के संग पहुँच गये। लोग डटकर श्रद्धा से सुनते रहे। सारा ग्राम झूम उठा। श्रोता उठने का नाम ही नहीं लेते थे। फिर से कलोई आने का निमन्त्रण पाकर आर्यवीर वहाँ से लौटे।

प्रादेशिक सभा के प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री पं. प्रभुदयाल का नाम तक वह सभा नहीं जानती। यह टोली उनके ग्राम की फेरी लगाकर उन्हें भी नमन कर आयी है। स्वामी सर्वानन्द जी के जन्मस्थान सासरौली भी गये। अब फिर वहाँ जानेवाले हैं। श्री अनिल आर्य, डॉ. योगेन्द्र यादव आदि भी जायेंगे। हमने कभी सुना था कि वहाँ स्वामी जी के नाम पर कुछ बनेगा, परन्तु धन एकत्रित करके कहाँ ले जाकर खर्च कर दिया गया। यह कुछ पता नहीं चल सका। अब फिर एक बार स्वामी जी के नाम पर कुछ बनाने का विचार मेरे मन में आया है। वहाँ गाँववाले अब दान क्यों देंगे? सोचा है कि किराये पर एक-दो कमरे लेकर कुछ कार्य आरम्भ किया जावे।

यह विश्व किसके वश में?- एक गम्भीर सैद्धान्तिक प्रश्न पर आज यहाँ चर्चा की जावेगी। कोरोना महामारी की चर्चा चली तो एक ने उत्तराखण्ड के मुख्यमन्त्री का वचन सुना दिया कि गंगा माँ की कृपा से कुम्भ स्नान में कुछ नहीं होगा और भी डुबकी लगानेवाले बाबों, गुरुओं, सन्तों और महन्तों के फोटो देखे और माँ गंगा की कृपा की दुहाई खूब सुनी। कुछ को यह कहते सुना **''भक्तों के वश में भगवान्।''** आत्महत्यारे अन्धविश्वासी हिन्दू की न तो आँखें हैं और न सोच है। उत्तरप्रदेश में बहती हुई गंगा बंगाल में जाकर सागर में गिरती है।

पूरे उत्तरप्रदेश में, बिहार में, बंगाल तक जहाँ-जहाँ से गंगा बहती जाती है कोरोना से अब तक सहस्त्रों जानें जा चुकी हैं और जा रही हैं। न गंगा कोरोना से बचा पाई और न श्रीराम और माताओं की मूर्त्तियों से यह महामारी भगाई गई। **'भक्तों के वश में भगवान्'** कहनेवाले क्या नहीं देख रहे कि न बाढ़ किसी भक्त के वश में है, न जंगलों में लगी आग, न ज्वालामुखी और न महामारी किसी के वश में है। कई सन्त, बाबे, साधु और घण्टे घड़ियाल बजाकर भगवान् को रिझानेवाले मृत्यु का ग्रास बन चुके हैं।

हम तो **'विश्वस्य मिषतो वशी'** यह सारा विश्व उस सर्वशक्तिमान्, कण-कण में व्यापक प्रभु के वश में मानते हैं। उस जगत्पिता के नियमों को जानने, मानने और उनका अधिक पालन करनेवाले ही बचेंगे। भक्तों के वश में भगवान् होता तो कोई भक्त देश का विभाजन रोककर दिखाता। कोई प्लेग की महामारी रोकता। कोई बाढ़ को रोककर दिखाता। भगवान् के मन्दिर और मूर्तियाँ श्री गिरिराज केन्द्रीय मन्त्री से पूछ लीजिये कैसे बाढ़ में बह गईं। न बद्रीनाथ ने सुनी, न अमरनाथ और सोमनाथ की सुनी गई। अन्धविश्वासों को आस्था मानकर राजनेता और प्रचारतन्त्र फैला रहे हैं। भगवान् इस देश जाति को अन्धविश्वासों से बचावे। न सूरज भक्तों के वश में है, न जल और न वायु। ईश्वर के अटल नियमों का घड़ियाल बजाने से कुछ भी बनता व बिगड़ता नहीं।

कभी चुनौती दी किसी ने?- महर्षि दयानन्द की अन्तिम मुम्बई यात्रा के समय एक गोरे पादरी जोसेफ कुक ने १७ जनवरी सन् १८८२ को मुम्बई के टाउनहॉल में एक धाराप्रवाह भाषण अंग्रेजी में देकर यह सिद्ध करने का यत्न किया कि विश्व में एक ही सच्चा धर्म है और इसी का ईश्वर में आविर्भाव हुआ है। यही ईसाई मत पूरे विश्व में फैलेगा। अंग्रेजी पठित लोगों पर पादरी की विद्वत्ता की बड़ी धाक थी। महर्षि दयानन्द ही तब इस पूरे देश में एकमेव ऐसा विद्वान् आगे आया जिसने पादरी को लिखित व मौखिक रूप से सत्यासत्य के निर्णय के लिये शास्त्रार्थ की चुनौती दी। तब तक वह देश के गई नगरों में व्याख्यान

देकर प्रसिद्धि पा चुका था।

पादरी मुम्बई से पूना भाग गया। उसका विचार तो सारे भारत में प्रचार करने का था। वह पूना से भी भागकर सात समुद्र पार चला गया। अब आर्यसमाज में कभी किसी सभा संस्था ने किसी विरोधी को सत्यासत्य का निर्णय करने की चुनौती दी क्या? माना कि राजनीतिक कारणों से अब मौखिक शास्त्रार्थों का समय नहीं रहा, परन्तु लिखित उत्तर-प्रत्युत्तर देने की चुनौती कभी किसी आर्यसामाजिक सभा संस्था ने किसी को दी क्या?

उत्तर देनेवालों की सूची- कई केन्द्र आर्यसमाज में महर्षि के स्मारक रूप में है यथा टंकारा, उदयपुर और अजमेर आदि। इन केन्द्रों के पास दूसरों का उत्तर-प्रत्युत्तर देनेवालों की कोई सूची है? गत दस वर्षों में किसी को किस-किसने कब-कब उत्तर-प्रत्युत्तर दिया। अभी एक ऐसी पत्रिका में विधवा-विवाह विषय को लेकर पुराने लेखकों के साहित्य का बड़े विस्तार से वर्णन किया गया है। यह इस विषय पर लेखक का पहला लेख हमें पढ़ने को मिला। उसने इस साहित्य को क्या कभी देखा भी है? पढ़ने की बात तो बहुत दूर की रही। पं. लेखराम जी की कोटि के महापुरुष की विधवा-विवाह पर पुस्तक के नाम का ही उसे ठीक-ठीक ज्ञान नहीं। अजमेर से पं. लेखराम जी का साहित्य लेकर वह भाई इसे पढ़ सकता था, परन्तु किसी नेता के बस की यह बात नहीं।

आर्यसमाज में इधर-उधर से उठाकर ऐसा विवरण तो दिया जा सकता है, स्रोत बताने की परम्परा गई। आर्यसमाज में विधवा-विवाह करनेवाले पाँच सात पुरुषों का नाम लिया होता तो आर्यसमाज का कुछ गौरव होता। उस भद्रपुरुष को श्री रोशनलाल बैरिस्टर के विवाह की 'जीवन यात्रा स्वामी श्रद्धानन्द' ग्रन्थ से अच्छी जानकारी मिल सकती थी। उसी ग्रन्थ में एक उच्च शिक्षित बंगाली विधवा महिला के पुनर्विवाह का पूरा वृत्तान्त उसी ग्रन्थ से मिल जाता। आश्चर्य का विषय है कि यह विवाह किसी मन्दिर में, किसी संस्था में सम्पन्न नहीं हुआ था। लाहौर में ब्रह्मसमाजी बंगाली नेता थे, परन्तु यह विवाह आर्यसमाज के एक नेता के गृह पर सम्पन्न हुआ। उस काल में महात्मा मुंशीराम के आशीर्वाद से इस विवाह की व्यवस्था उस आर्यनेता ने स्वगृह पर यह विवाह करवाकर आर्यसमाज की धूम मचा दी। वर्ष में एक-दो बार अपने यहाँ बाहर से श्रोताओं को बुलवाकर एक-आध कार्यक्रम करके भाषण करवाने से न धर्म प्रचार होगा न ही संगठन सुदृढ़ होगा। नियमपूर्वक श्रद्धाभक्ति से यज्ञ, सन्ध्या, सत्संग, धर्म, प्रचार तथा सत्यासत्य के निर्णय के लिये विरोधियों को चुनौती देने से आर्यसमाज के तप तेज का पता चलेगा।

भीड़ का संन्यास और संन्यासियों की भीड़- आर्यसमाज ने कभी भीड़ इकट्ठी करके संन्यास-दीक्षा का ढोल नहीं पीटा था। हाँ, कई बार किसी बड़े उत्सव पर चुपचाप किसी ने संन्यास लेकर सबको चौंका दिया। स्वामी दीक्षानन्द जी ने कहा कि मैं एक सौ व्यक्तियों के साथ संन्यास लूँगा, परन्तु वह अकेले ही थे संन्यास लेनेवाले। फिर वेशों ने एक बार एक सौ को संन्यास लेने-देने का प्रचार किया। यह भी बस एक समाचार बनकर रह गया। फिर एक बार मेरे एक परिचित ने कुछ वर्ष पूर्व मुझे कहा हम एक सौ व्यक्ति संन्यास लेंगे। संन्यास का सम्बन्ध मन:स्थिति से, वैराग्य से और मिशन से है। यह समाचार पत्रों का पेट भरनेवाला कार्यक्रम नहीं। अब दो सौ को संन्यास देने की घोषणा हुई है। देखेंगे इनमें स्वामी नित्यानन्द नारायण स्वामी, स्वामी रुद्रानन्द और स्वामी वेदानन्द के पद्चिह्नों पर चलकर समाज में नवजीवन का संचार कोई करेगा या भीड़वाला बाबा ही बनेगा।

देवदासियों की कुप्रथा और आर्यसमाज- डॉ. वेदपाल जी ने देवदासी कुप्रथा आदि कुछ विषयों पर आर्यसमाज के इतिहास की ठोस चर्चा इस सेवक से की। अगले अंक में इस पर विस्तार से कुछ लिखा जावेगा। आज इस सम्बन्ध की एक अनूठी घटना देकर आर्यसमाज का एक स्वर्णिम पृष्ठ रखता हूँ। दक्षिण में रहते हुये मैं यादगीर समाज की रजत जयन्ती पर पहुँचा। पं. नरेन्द्र जी ने कहा, आज यहाँ विश्राम करें। प्रात: से कार्यक्रम होगा। मैंने कहा मैं सुरपुर जाता हूँ, रात्रि वहाँ प्रचार करूँगा। बस में खड़े होने को स्थान मिला। भीड़ में से आवाज आने लगी। पं. जी यहाँ आयें बैठें। दक्षिण में आर्यविद्वानों को ही पण्डित जी कहकर पुकारा जाता है। बस में मेरे अतिरिक्त कोई आर्यसमाजी था ही नहीं। आवाज़ देनेवाले ने कहा,

''मैं आप ही को बुला रहा हूँ।'' मैं पास गया तो वह खड़ा हो गया। मुझे कहा, ''यहाँ बैठिये।'' मैंने धन्यवाद करते हुये उसे कहा, ''आप ही बैठिये।'' उसने कहा, ''आप मुझे नहीं जानते। मैं तो आपको जानता हूँ। मैंने आपको अपने आर्यसमाज के प्रधान श्रीयुत् रामचन्द्र जी वर्मा के साथ देखा था। साथ के साथ कहा, आर्यसमाज ने हमारा बेड़ा पार कर दिया। उद्धार कर दिया और सुधार कर दिया। मैं तो देवदासी का पुत्र हूँ। अब मैं प्रधान आर्यसमाज की कृपा से पढ़-लिखकर अध्यापक बन गया। परिवार गन्दगी से निकल गया है। मेरी बहिन का भी विवाह हो गया है। प्रधान जी ने मुझे अध्यापक भी लगवा दिया है।''

भरी बस में उसने मुझे यह जानकारी दी। मैं सुनकर दंग रह गया। श्री रामचन्द्र जी वर्मा प्रधान ने उस युवक के कथन की पुष्टि की। यह घटना आप कर्नाटक आर्यसमाज के इतिहास में पढ़ सकते हैं। मैं अब उस युवक का नाम तो भूल गया हूँ। सम्भव है कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा के पूर्व प्रधान और उन प्रधान जी के सुपुत्र डॉ. राधाकिशन जी वर्मा को उसका नाम याद हो। वह इस सत्य इतिहास को, इस गौरवपूर्ण घटना को जानते हैं।

आर्यसमाज का यश ऐसे तप:पूतों ने बढ़ाया। भवनों का निर्माण करने से यह स्वर्णिम इतिहास नहीं बना था।

एक आहुति अपने आचार्य के लिए.....

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गोशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की नि:शुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें। - **कन्हैयालाल आर्य - मन्त्री**

उन्नति का कारण

जो मनुष्य पक्षपाती होता है। वह अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मत वाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है, इसलिए वह सत्य मत को प्राप्त नहीं हो सकता।

सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है। सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

ऐतिहासिक कलम से....

दैनिक ब्रह्मचर्य तथा दैनिक संन्यास

पं. चमूपति एम.ए.

क्या तू इस भ्रम में फँस गया कि तुझे घर-बार त्याग, वन में कुटिया बनाकर रहने का उपदेश दिया? भोले! वृथा भयभीत मत हो! ईश्वर ने भी तो तेरे कुटुम्ब को नहीं त्यागा, तू इसे क्यों त्यागेगा? प्रकृति के दबाव में आने से जीव दबता है, उस पर अधिकार पाने से उन्नत होता है। तू संसार से उच्च है, संसार को अपने पीछे लगा। अपने सामर्थ्य के कोष को खोल! अपने ऊपर विश्वास कर, और सारे संसार का नमस्कार ले! एकान्तवास का तुझे इसलिये उपदेश नहीं देते कि तू जड़ पदार्थों तथा उनसे लिप्त जीवों से डर कर छिप जाय। जड़ में इतनी सामर्थ्य कहाँ कि शुद्ध चेतन पर प्रभुत्व रखे? और जो चेतन जड़ प्रकृति के हथकण्डों में आ चुके हैं, वह जड़ों से भी गए गुजरे जड़तम हैं। तुझे तो एकान्त-गृह की सम्मति इसलिए देते हैं कि तू अपने बल को इकट्ठा कर ले। पहलवान कुश्ती में आने से पूर्व लंगोट कस लेता है। योद्धा अस्त्र बाँधकर रणक्षेत्र में उतरता है। तू भी शस्त्रों से सुसज्जित हो। ज्यों-ज्यों दिन चढ़ेगा, त्यों-त्यों संसार का रणक्षेत्र तपता जायेगा और तुझे उत्साहपूर्वक संग्राम में भाग लेना होगा। तू प्रातः समय ही अपने बल का एकाग्रमन द्वारा संग्रह कर। चढ़ती कला सब संसार का भला। संसार भर के धार्मिक तथा सामाजिक नेता संसार से पृथक् न हुए, इसी में विचरे, परन्तु कुछ समय के लिये उन्हें तप करना आवश्यक था। महात्मा बुद्ध[१] के सम्बन्धी भ्रमवश यह समझते रहे कि राजकुमार घर-बार से रुष्ट होकर वनों में भाग गये हैं। वस्तुतः वह उन्हीं मोह-ग्रस्तों के मोक्ष की धुन में 'बोधि वृक्ष' की एकान्तमयी छाया ढूंढ रहा था। मुहम्मद[२] 'हरा' की पहाड़ी में 'मक्के' से दूर न था। 'मक्का' उसके मन में बसता था, मक्के को आत्मिक मदीना (नगर) बनाने के लिये उसे आत्मसंयम करना आवश्यक था। कर्षणजी मूल जी को भागने से रोकता है कि कहीं वन बालक की मृत्यु न बने। उसे क्या पता था कि अमृत निर्जन स्थानों में है, जिसकी उपलब्धि से समस्त जगत् को मृत्यु के भय से छुड़ाया जा सकता है। दयानन्द अपनी आयु के इतने वर्ष किसी व्याघ्र की गुफा में छिपा न था। वह अपनी आत्मा में स्थित उस अन्तरीय ज्योति को वायु के झकोरों से बचा रहा था, जिससे संसार में फिर वेद का दीपक प्रदीप्त होना था।

क्या वह आत्म-संयम केवल ऋषियों तथा नेताओं के लिये नियत है? नहीं! प्रत्येक मनुष्य संसार में नेता है। जो नेतृत्व का नाश करता है वह अपनी दैवीशक्तियों से अनभिज्ञ है। आत्म-हत्यारे ने आत्म-गौरव को नहीं पहिचाना। अरे! तुझे अधिकार है तू सबको पीछे लगा! हाँ! ईश्वरीय नियमों को बदलने का प्रयत्न मत कर। बदलेगा तो स्वयं बदला जाएगा। हमारे पूर्वजों की दूरदर्शी आँख प्रकृति के अथाह समुद्र में डुबकी लगाती और क्षण-क्षण में शिक्षा के अमूल्य मोती बाहर लाती थी। वेद मानुषीय जीवन को चार भागों में विभक्त कर प्रत्येक मनुष्य को आत्मविकास का समान अवसर देता है। ब्रह्मचर्य की अवस्था आत्मसंयम की अवस्था है। जिस अभिप्राय से दयानन्द वनों में फिरता रहा, मुहम्मद पर्वत की गुफा में गुप्त रहा, बुद्ध ने निरर्थक तपस्याओं के पश्चात् बोधिवृक्ष के नीचे बोधि-तत्त्व पाया, उसी अभिप्राय की सिद्धि प्रत्येक आर्य को अपनी आयु के प्रथम २५ वर्षों में करनी है। फिर वह गृहस्थ में आये और जगत्पुरी में एक पूर्णतया सज्जित विद्यार्थी की भाँति प्रविष्ट हो। शोक! माँ-बाप ने तुझे वन का विद्यार्थी न बनाया। क्या अब तुझे ऐसों के लिये आशा नहीं है? है! अपने प्रत्येक दिन के पूर्व-भाग को ब्रह्मचर्य के सदृश बना। अर्थात् नगर से दूर किसी वन में अथवा पर्वत पर चला जाया कर। यदि तू प्रतिदिन खोए हुए बल को फिर अपनी ओर बुलाता रहा, तो तेरे लिये फिर से बलयुक्त हो जाना कुछ कठिन बात नहीं। गृहस्थ के धन्धों में दिन के मध्य का भाग व्यतीत कर। सायंकाल होते ही फिर घर से पृथक् हो जा और प्राकृतिक दृश्यों की सैर तथा उस महती शक्ति को स्मरण कर जिसे अपने अन्दर देखता हुआ भी तू उसके संसर्ग से वञ्चित है। यह गृहस्थ में ही

संन्यास अथवा वानप्रस्थ होगा। भाई! क्या पता है तू कितना काल जिये। तुझे वनस्थ होने का अवसर मिले वा नहीं, जीवन-लता के चार फल अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष तू इकट्ठे ही लाभ कर। एक ही आश्रम में चारों आश्रमों का आनन्द लूट और सफल-मनोरथ हो।

अपूर्व डायरी

तुझे पहला पाठ यह पढ़ाया कि अपने कृत्यों पर ध्यान दे। तुझे चिन्ता हुई कि भूतल पर मेरे कर्त्तव्य क्या हैं? ऋषियों ने इसकी तालिका बना दी है, जो एक अपूर्व क्रम के साथ सन्ध्या मन्त्रों में समाविष्ट है।

सावित्री मन्त्र के साथ सविता देव 'ओ३म्' का आश्रय ले, जो तेरी उन्नति का अचूक उपाय है और 'शन्नो देवी' इत्यादि मन्त्र द्वारा चित्त को सब प्रकार के विकारों से रिक्त कर। इन्द्रिय-स्पर्श से शरीर की वृद्धि सम्बन्धी, मार्जन मन्त्रों से मन तथा इन्द्रियों की शुद्धि सम्बन्धी कर्त्तव्य जान। प्राणायाम तुझे शारीरिक बल तथा मानसिक नैरोग्य देगा। अघमर्षण से पाप का नाश कर और मनसा परिक्रमा से गृहस्थ तथा समाज, नहीं! नहीं! सारे संसार को प्रेमपात्र जानकर निर्वैर तथा द्वेषशून्य हो जा। आगे उपस्थान है, अर्थात् परमात्मा के निकट बैठना। यदि भावना सामर्थ्ययुक्त है और दिव्य-चक्षु खोल सकता है, तो उस अदर्शनीय का दर्शन कर कृतकृत्य हो। कैसी अपूर्व सीढ़ी है! शरीर से मन, मन से आत्मा, आत्मा से परमात्मा तक पहुँचा दिया और तुझे चाहिए ही क्या? संसार भर की प्रार्थनाएं पढ़ जा। और कहीं यह बात नहीं।

मेरे प्रिय! जीवन के सब अंगों में अपना कर्त्तव्य समझ चुका। परमात्मा को साक्षी मान इन कर्त्तव्य का चिन्तन किया। यह दूसरे शब्दों में तेरे व्रत हैं। दिनभर इनका पालन करना। परमात्मा से ठट्ठा न करना। उसको बीच में लाकर उपहास करने का प्रयत्न मत कर। बड़े से बड़े न्यायाधीश के समक्ष तूने अपना प्रतिज्ञा-पत्र (सन्ध्या में आये व्रत को) रजिस्ट्री कराया। उसको तोड़ेगा तो अतीव दण्ड का भागी होगा। उपासकों की भाषा में प्रार्थना और प्रतिज्ञा पर्यायवाची हैं। तूने शुद्ध हृदय से प्रण किया। जगज्जननी ने तुझे आशीर्वाद दिया। शिवाजी[3] की माता का आशीष निरर्थक नहीं हुआ। राजपूत जननियाँ आशीर्वाद का फल अपने वीर बच्चों के बलिदान अथवा विकट वीरता के रूप में देख कृतकृत्य हुईं। जापानियों ने अपने दूध पिलानेवालियों के शुभ शब्दों का मान रूसियों को विनष्ट करके रखा। तुम जगज्जननी के आशीर्वाद का क्या सत्कार करते हो? तुम्हारा दिन का व्यवहार दर्शायेगा। प्रातःकाल की सन्ध्या तुम्हारा ब्रह्मचर्य है, उसमें यह प्रतिज्ञाएँ करना। सायंकाल की सन्ध्या-संन्यास है, इसमें इन प्रतिज्ञाओं की आलोचना करना कि पूरी हुईं या नहीं! उक्त दोनों आश्रम 'ओ३म्' में विचरने के हैं। तभी तो गृहस्थ में ब्रह्मचर्य और संन्यास का स्वाद चखाया।

मन्दिर के पुजारियों का जनता के हृदय पर क्या प्रभाव है। विचारशील उन्हें दुराचारी समझते हैं। कारण यह है कि उनका समय तो प्रायः ईश्वर स्मरण में जाता है, फिर भी वह आचरण से नीचे रहते हैं। भाई! वह केवल जिह्वा से राम नाम रटते हैं, मन पर उसका लेशमात्र भी प्रभाव नहीं पड़ता। उनकी जिह्वा ग्रामोफोन की तरह चलती रहती है, परन्तु मन में कुविचार ही डेरा डाले रहते हैं। जप और है, जीवन और। तुम सन्ध्या का सम्बन्ध जीवन से न तोड़ना। आचार-व्यवहार में सदा सन्ध्या मन्त्रों की झलक विद्यमान रहे। यह क्या कि विध तो मिलाओ, पर व्यापार न करो।

जिन प्रार्थनाओं में जीवन अपने आप को पतित तथा पापी कहे और परमात्मा को पतितपावन और नित्यप्रति एक ही से शब्दों में गिड़गिड़ा कर कहा करे, "हे भगवान्! तू मुझे उठा, पर स्वयं उठने का यत्न न करे, वो प्रार्थनाएँ निरर्थक हैं। यदि आज भी मैं उतना ही पापी हूँ जितना कल था, तो ईश्वर ने मेरी प्रार्थना नहीं सुनी और मेरा यह भ्रम कि वह पतितोद्धारक है, निर्मूल सा है। रोज ऐसे शब्द दुहराने से उपासक और उपास्य में एक स्थायी सम्बन्ध स्थिर हो जाता है। उपासक सदैव पापी रहेगा और परमात्मा को भावी उद्धारक समझ मोद मनायेगा। वह समय कभी न आयेगा, जब वह भावी उद्धारकर्त्ता वर्तमान उद्धारकर्त्ता बने। यह ईश्वर पर लांछन है। सन्ध्या ऐसी आत्मघातक प्रार्थनाओं से रहित है। पाप का स्मरण पश्चात्ताप के लिये कर। अपने आप को यों ही पापी कहना पुण्य नहीं। तू जो प्रार्थनाएँ सन्ध्या द्वारा अथवा अन्य शब्दों में किया करता है, उन्हें सार्थक जान और सार्थक बना और प्रतिदिन पहिले

की अपेक्षा कुछ उन्नति करता जा। फ्रैंक्लिन ने अपने जीवन को डायरी से सुधारा था। उसकी डायरी से तेरी सन्ध्या अत्यन्त श्रेष्ठ है। (हाँ, हमें सन्ध्या का डायरी के रूप में उपयोग करना आना चाहिये।)''

जी नहीं मानता?

पिछले शीर्षकों में हमने उपासना की आवश्यकता पर बल दिया था। हम कल्पना करते हैं कि अब पाठक प्रातः सायं ईश्वर के समीप बैठने, अपने आचरण पर ध्यान रखने तथा अपनी त्रुटियों को मिटाने के लिए बल की याचना करने पर कटिबद्ध है। हमने ऊपर बताया कि इन सब मनोरथों की सिद्धि सम्यक्तया सन्ध्या से ही हो सकती है। इस पर उपासक को कुछ शंकाएँ हैं। लो! हम उनका भी निवारण कर दें, मुमुक्षु के प्रश्न जिज्ञासुओं के से प्रश्न हैं। वह यह नहीं कि थोड़ा-सा संशय होने पर धर्म की मर्यादा छोड़ दे। यदि उसकी बातों का उत्तर आज न भी दें, तो भी वह सन्ध्या करता रहेगा, और उस अवसर की धैर्य से प्रतीक्षा करेगा, जब उसके मन से कंटक निकाल दिया जाय ताकि जिस शान्ति की उपलब्धि के लिये उसने आसन लगाया है, उसे वह पूर्णतया प्राप्त हो। यही सम्मति हम प्रत्येक आर्य भाई को देंगे कि वह थोड़ा सा सन्देह होने पर नैतिक कर्म को छोड़ें नहीं। सम्भव है, उन्हीं की बुद्धि में भ्रम हो।

पहला संशय

सन्ध्या संस्कृत में ही क्यों करूँ? मुझे उसके अर्थ नहीं आते। आर्य-भाषा अपनी जातीय तथा राष्ट्र-भाषा है। मैं उसी में अपने प्रभु से बात करूँगा। ठीक! उपासना-मण्डल के पक्षी तू पार्थिव भाषाओं के आकाश में ऊँचा उड़, अजात के आगे जाति का बखेड़ा न डाल। इस ममता को छोड़। तू ईश्वर की वाणी में ईश्वर से वार्तालाप कर। जगज्जननी की गोद में बैठकर तू वही सन्ध्या सुना, जो तुझे सृष्टि के आदि में सिखाई गई। वेदों की भाषा किसी जाति अथवा देश-विशेष की भाषा नहीं। यदि है तो मनुष्यमात्र की, नहीं तो किसी की नहीं। संसार की तो गुप्त-गुप्त भाषाओं से भी तू परिचय पाने का यत्न करता है और पुरानी तथा नई पुस्तकों, शिलाओं, लिपियों तथा स्मारकों की खोज से पुराने मनुष्यों के मनोविकास का पता लगाता है और उस सकल वाणी के स्रोत, ज्ञान के भण्डार वेद की ओर जाता ही नहीं, जिसमें जातियों के साँझे पूर्वज परमेश्वर ने अपना अनादि विचार प्रकट किया। वेद के अर्थ सरल हैं। आदिम ऋषि बिना कुछ और जाने इन मन्त्रों का अभिप्राय जान सके। तुझे भी इनमें बहुत परिश्रम न होगा।

(२) सन्तोष नहीं हुआ? जो मन में है; कह! निःशंक होकर कह! जी नहीं मानता। आज भी यह सन्ध्या! बड़े होकर भी यह सन्ध्या, वृद्ध की भी यही, पापी की भी यही, पुण्यात्मा की भी यही? न आयु का भेद न मनोविकास का भेद?

प्राणों से अधिक प्रिय मानस-विद्या के पूर्णवेत्ता यहाँ सांसारिक मनोविद्या (Psychology) लागू नहीं। यह मार्ग कुछ विचित्र है। जब तू इसमें प्रविष्ट हुआ और कुछ उन्नति की तो सब रहस्य तुझ पर खुल जायेंगे। यहाँ जो 'अ' है वहाँ है। जो बच्चे के खेल के खिलौने हैं, वही युवक के उत्साह एवं पुरुषार्थ की सामग्री है। जवान का प्रवृत्ति मार्ग वही, बुड्ढे का निवृत्ति-मार्ग वही। योगी के योग का साधन वही, रोगी के रोग का निवारण वही। पापी पाप का नाश करे, धर्मात्मा धर्म का प्रकाश पाये। यह मन्त्र केवल सिद्धान्त है। प्रयोग अवस्था के अनुसार होगा।

वेद का चमत्कार

हमने लाख यत्न किया, इन मन्त्रों का अनुवाद आर्यभाषा, उर्दू तथा इंग्लिश में कर दें, परन्तु सफलता न हुई। कारण यह कि उसी भाषा में किसी एक मनुष्य के किसी एक क्षण के विचार एक से शब्दों में आ सकते हैं? सबके लिये एक बात बन जानी सम्भव नहीं। वेद का चमत्कार निराला है। यह वह दर्पण है, जिसमें प्रत्येक मुख अपना प्रतिबिम्ब देख सकता है। तू भी इस उज्ज्वल शीशे में अपनी उज्ज्वल आकृति देख।

अवस्थाएँ भिन्न सही, पर आदर्श एक है। वेद के मन्त्र प्रत्येक के लिये एक सा संकेत करते हैं। जिसने समझा, तर गया! न जाना, रह गया। अन्य मतों पर जिह्वा न खुलवाओ। सब अपने-अपने समय की झलक रखते हैं और वेद की झलक सब समयों में है। सब पर अपने-अपने देश की मोहरें हैं और वेद की मोहर सब देशों पर है।

सब अपने-अपने प्रवर्तक की परछाईं लिये हैं। वेद

बिना परछाईं वाले की परछाईं है। बालक दूर के दृश्य को न देखे, उसे पता न सही कि उसकी यात्रा का अन्त कहाँ होगा। पर क्या उसे सड़क भी वह न दिखाएँ जिस पर उससे बड़े उसके अग्रगामी गए हैं।

प्रभु का द्वार सबके लिये खुला है

भाई! कह दिया। ब्रह्म-यज्ञ का उद्देश्य हृदय-क्षेत्र का फैलाना है। तू क्यों उसे संकुचित करता है। शूद्र है? आ! तुझे ब्राह्मण के साथ बिठाऊँ। वैश्य है? क्षत्रियों की पंक्ति में बैठ।

बुड्ढे को लज्जा है, मैं बालक के पीछे बिठाया जाऊँगा। पिता को चिन्ता है मुझसे पुत्र उच्च-स्थान प्राप्त करेगा। पुरुष भयभीत हैं, कहीं स्त्रियाँ ही हमसे अधिक अधिकार न ले लें। सांसारिक लोग सांसारिक शृंखलाओं में जकड़े खड़े हैं। कभी मुक्त हुए नहीं, मुक्ति चाहते नहीं। समस्या भेदों के नाशक, असमानों में समान सर्वव्यापक परमात्मा के दरबार में ऊँच-नीच कैसी?

बाल-भानु की सुन्दरता में नहाई हुई किरण किस आँख को प्रकाश के साथ आनन्द नहीं देती? तारों भरे आकाश की टिमटिमाती ज्योति न पुरुष से पर्दा करती है, न स्त्री से। वर्षा ऋतु के पपीहे का स्वर न शूद्र के कान में सिक्का पिघलवाता है न ब्राह्मण के। यह और बात है कि द्रष्टा की दृष्टि तथा श्रोता की श्रुति उसके अनुभव में भेद कर दे। पर दृश्य तथा श्रुत तो एक रहेगा ही।

ऐसे ही सन्ध्या के मन्त्र एक, उपासकों की अवस्था भिन्न-भिन्न। अपने-अपने बोध के अनुसार चिन्तन करें और लाभ उठावें। स्वच्छ जलवायु रोगी के रोग को मिटाता है, तो स्वस्थ के स्वास्थ्य को भी बढ़ाता है। फिर सन्ध्या में पापी और पुण्यात्मा का भेद क्या?

परमात्मा के अमृत पुत्रो! सदैव बाह्य भेदों की गोदड़ियों में गुप्त रहने वालो! अपने स्वरूप को पहिचानो। उज्ज्वल सूर्य को कालिमामय न करो। बाह्य ओढ़नों को उतारो। नंगधड़ंगा जीव लाडेश्वरी माता के गोद में लाड करने चला है।

शूद्र भाई! तू भी ब्राह्मण के अमृत पिता का अमृत पुत्र है। देवि! हमारी उपास्या देवी ही है। सत्तरे बहत्तरे! परमात्मा की आयु का पार ही नहीं। वह अतिवृद्ध है। बालक! तू नवजात है तो परमात्मा की शक्ति भी नित्य नई है। फिर क्या? आ जाओ! एक बार तो भेदरहित अभेद्य के आगे इन भयंकर भेदों को छिन्न-भिन्न कर डालें और प्रभु के प्रेम मन्दिर में अभेद हो जाएँ।

टिप्पणी

१. बौद्ध धर्म के प्रवर्तक। ५५० ई. पूर्व अर्थात् ४९४ वि. पू. में इनका जन्म हुआ। शाक्य जाति के राजकुमार थे। वैराग्यवश घर से निकले। वनों में फिरे। तपस्याएँ कीं। अन्त को ध्यान में लीन होकर 'बोधि तत्त्व' को पाया और बुद्ध हुए। घरवालों को बौद्ध किया और देश में बौद्धधर्म फैलाया।

२. मुहम्मदी मत के प्रवर्तक। इस्लाम फैलाने से पूर्व 'हरा' नामक पहाड़ी में ध्यान-निमग्न रहे। इनका जन्म ५१४ वि. में हुआ और ५८५ वि. में इस देह को छोड़ा।

३. मराठा राज्य संस्थापक। इनका जन्म १५७७ वि. में हुआ। नीति और धीरता में अद्वितीय था। जागीरदार के लड़के से राजा हुआ। मृतप्राय आर्यजाति में फिर से प्राण डाले। क्षत्रियों के रुधिर को गरमाया और छीने हुये राज्य को आत्मसात् किया। राज्यविधि चातुर्यपूर्ण थी। औरंगजेब तक ने इस वीर का लोहा माना।

विद्या के कोष की रक्षा व वृद्धि राजा व प्रजा करें

वे ही धन्यवादार्ह और कृत-कृत्य हैं कि जो अपने सन्तानों को ब्रह्मचर्य, उत्तम शिक्षा और विद्या से शरीर और आत्मा के पूर्ण बल को बढ़ावें जिससे वे सन्तान मातृ, पितृ, पति, सास, श्वसुर, राजा, प्रजा, पड़ोसी, इष्ट मित्र और सन्तानादि से यथायोग्य धर्म से वर्त्तें। यही कोष अक्षय है, इसको जितना व्यय करे उतना ही बढ़ता जाये, इस कोष की रक्षा और वृद्धि करने वाला विशेष राजा और प्रजा भी है।

(सत्यार्थ प्रकाश सम्मुलास ३)

शङ्का समाधान-५९

डॉ. वेदपाल

श्रीमान् जी कुछ शङ्कायें हैं कृपा करके समाधान करने का कष्ट करें-

१- सामान्य प्रकरण में लिखा है- ''नीचे लिखी आहुति चौल, समावर्तन और विवाह में मुख्य हैं, वे चार मन्त्र ये हैं-'' तीन पवमान आहुतियों के और एक प्रजापति की आहुति कुल चार मन्त्र हैं।

शङ्का- संस्कारविधि में इन संस्कारों के अतिरिक्त उपनयन संस्कार में भी देना लिखा है। अतः ये चारों आहुतियाँ सामान्य प्रकरण के अनुसार तीन संस्कारों में ही दी जाएं या चार संस्कारों में दी जाएं?

२- सामान्य प्रकरण में इन आहुतियों को व्याहृति आहुतियों के उपरान्त अष्टाज्याहुतियों से पूर्व देना लिखा है। जबकि संस्कारविधि के अन्दर चारों संस्कारों के विधि प्रकरण में इनको अष्टाज्याहुतियों के उपरान्त प्रधान होम में देना लिखा है। कहाँ पर देना उचित है?

३- क्या इन आहुतियों को सभी यज्ञों एवं संस्कारों में दिया जाना उचित है? यदि उचित है तो सभी के लिए क्यों नहीं लिखा?

४- सामान्य प्रकरण में व्याहृति आहुतियों के उपरान्त स्विष्टकृत् एवं प्राजापत्याहुति (मौन) देना लिखा है, परन्तु संस्कार विधि के अन्दर सभी संस्कारों में (जहाँ पर देना उचित है) प्रत्येक कर्म के प्रधान होम की आहुतियों के पश्चात् तथा पूर्णाहुति से पूर्व लिखा है। कहाँ पर देना उचित माना जाय?

दिनांक - १६-०३-२०२१

भवदीय

मोहन देव, अध्यक्ष, महर्षि दयानन्द सरस्वती वैदिक साधु आश्रम, जघोनगेट, सर्क्यूलर रोड़, भरतपुर (राज.)

समाधान- वैदिक संस्कृति में मान्य कर्मकाण्ड के दो प्रकार या भेद हैं- १. श्रौत, २. स्मार्त्त। श्रौतसूत्र विहित अग्न्याधानम् से लेकर अग्निहोत्र पर्यन्त (अग्निहोत्र श्रौत परम्परा में अन्तिम नहीं है। यहाँ केवल सर्वजन सुबोध तथा यज्ञों में इसके स्वल्पकाल एवं स्वल्प द्रव्य साध्य होने की दृष्टि से उल्लेख किया है, क्योंकि एकाह आदि अहीन याग भी जिसे एकदिन साध्य समझ लिया जाता है, वह भी एक मास से अधिक अवधि में सम्पन्न होता है।) यज्ञ श्रौत हैं। समस्त संस्कार तथा औपासन होम एवं वैश्वदेव आदि स्मार्त्त हैं। दोनों प्रकार के कर्मों की स्वशास्त्र विहित विधियाँ उपलब्ध हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने उभयविध कर्मकाण्ड को मान्यता प्रदान की है, किन्तु महर्षि को इतना अवकाश नहीं मिला कि वह पृथक्शः श्रौत-स्मार्त्त की सविस्तर विधि प्रतिपादित कर पाते। महर्षि ने संस्कारों के विधानार्थ 'संस्कार विधि' तथा पञ्चमहायज्ञों के विधानार्थ 'पञ्चमहायज्ञ विधि' का प्रणयन किया। जबकि संस्कार विधि के गृहाश्रम प्रकरण में भी इन्हीं पञ्चमहायज्ञों का विधान किया गया है।

कर्मकाण्डीय ग्रन्थों में ग्रन्थकार किसी विषय का बार-बार कथन करने से बचने के लिए कुछ परिभाषा दे देते हैं। यह परिभाषा एक बार लिखित होने पर भी आवश्यकतानुसार प्रवृत्त हो जाती है। कात्यायन श्रौतसूत्र का प्रथम अध्याय तथा द्वितीय अध्याय की प्रथम चार कण्डिकाएं 'परिभाषा निरूपणम्' नाम से प्रसिद्ध हैं। इसमें भी प्रथम अध्याय को 'परिभाषाऽध्यायः' नाम से जाना जाता है। इन परिभाषाओं की प्रवृत्ति इस प्रकार होती है। जैसे-

'प्राङ्मुखो यज्ञोपवीत्याचम्य...' आश्व. श्रौ. पूर्वषट्क १.१ यहाँ श्रौतकर्म कर्त्ता 'पूर्वाभिमुख, यज्ञोपवीत धारण किए आचमन करके' का अर्थ है कि वह यज्ञोपवीती हो तथा आचमन करके कर्म में प्रवृत्त हो, किन्तु यदि यज्ञोपवीती नहीं है, तो क्या कर्म में प्रवृत्ति ही नहीं होगी? नहीं ऐसा नहीं है। प्रथम आचमन-अङ्गस्पर्श कर तदनु यज्ञोपवीत धारण करके वह कर्म में प्रवृत्त होगा। यहाँ यज्ञोपवीत प्रथम कथित होने पर भी आचमन के पश्चात् धारण किया जाएगा। कात्यायन का परिभाषा सूत्र है- **'उपवीतिनः प्राञ्च्युदञ्चि वा'** का. श्रौ. १.७.२३-२४ जितने भी कार्यकर्त्ता हैं, वे सभी उपवीत धारण कर ही कर्म में

प्रवृत्त हों तथा यज्ञ से सम्बद्ध सभी विधियां पश्चिम से प्रारम्भ कर पूर्व अथवा दक्षिण से प्रारम्भ कर उत्तर की ओर होंगी। अब यदि किसी भी यज्ञ में चाहे परिस्तरण, पर्यग्निकरण आदि कोई भी कार्य हो तथा उसकी प्रक्रिया भले ही उल्लिखित न हो, तब भी वह उक्त सूत्रानुसार ही की जानी अपेक्षित है।

संस्कार विधि का सामान्य प्रकरण भी परिभाषा प्रकरण ही है। इसे समझने में दो कारण से भूल होती है-

१. सामान्य पाठक सूत्रग्रन्थों एवं उनकी शैली से अपरिचित है।

२. संस्कार विधि का सामान्य प्रकरण श्रौत एवं स्मार्त दोनों का मिला-जुला रूप है। इसकी अधिकांश विधियां स्मार्त्त हैं, **किन्तु यज्ञ एवं अग्निहोत्र प्रकरण न तो पूर्णतः स्मार्त्त है और न ही श्रौत।** इसे समझने के लिए दोनों का परिज्ञान आवश्यक है। प्रायः पाठक सामान्य प्रकरण की शब्दानुपूर्वी को सर्वत्र उसी अनुक्रम से प्रवृत्त करना उचित मानता है। जबकि श्रौत एवं गृह्यसूत्र इस सन्दर्भ में स्पष्ट निर्देश करते हैं कि प्रक्रिया में कौन सी विधि कहाँ होगी? तथा किसी विशेष परिस्थिति में किस प्रकार परिवर्तन होगा। इसे हम एक उदाहरण से समझ सकते हैं-

सर्वविध होमकर्म में अवश्य कर्त्तव्य चौदह आहुति का क्रम निम्नवत् है- आघारावाज्यभाग, महाव्याहृति, सर्वप्रायश्चित्त, प्राजापत्य, स्विष्टकृत् (२+२+३+५+१+१=१४) यह सामान्य नियम है, किन्तु हव्य के घृत से भिन्न होने पर स्विष्टकृत् आहुति अन्तिम चौदहवीं न होकर आघारावाज्यभाग के पश्चात् तथा महाव्याहृति से पूर्व देनी होती है। तद्यथा- ''**अन्वारब्ध आघारावाज्यभागौ महाव्याहृतयः सर्वप्रायश्चित्तं प्राजापात्य ७ं स्विष्टकृच्च। एतन्नित्यं सर्वत्र। प्राङ्महाव्याहृतिभ्यः स्विष्टकृदन्यच्चेदाज्याद्धविः**'' पा. गृ. १.५.३-५ में दी जाने वाली स्विष्टकृत् आहुति का स्थान बदल गया है। सूत्र ग्रन्थों के समझे बिना कर्मकाण्ड की प्रक्रिया को समझना सम्भव नहीं है।

आपकी शङ्काओं पर इसी शास्त्रीय दृष्टि से संक्षेप में समाधान प्रस्तुत है-

१. '**भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूंषि.**' आदि चार आहुति उपनयन संस्कार में देने का निर्देश सामान्य प्रकरण में नहीं है, किन्तु उपनयन के विधिभाग में महर्षि ने निर्देश किया है। इसलिए सामान्य प्रकरण में निर्देश न होने पर भी उपनयन में निर्देश किए जाने के कारण उपनयन संस्कार में ये चार आहुति देनी चाहिएं।

श्रौतसूत्रों की सामान्य परिभाषा है- ''**प्रसङ्गादपवादो बलीयान्**''- आश्व. श्रौ. पूर्व षट्क १.१ प्रसङ्ग=सामान्य नियम की अपेक्षा अपवाद= विशेष नियम बलवान् होता है। अतः सामान्य प्रकरण का नियम सामान्य तथा उपनयन संस्कार का नियम अपवाद है। अतः उसकी प्रवृत्ति होकर उपनयन में भी ये चार आहुति दी जाएंगी।

ऋग्वेदीय आश्वलायन गृह्यसूत्र- ''**उदगयन आपूर्यमाणपक्षे कल्याणे नक्षत्रे चौलकर्मोपनयनगोदानविवाहाः।...। तेषां पुरस्तात् चतस्र आज्याहुतीर्जुहुयात्। अग्न आयूंषि पवसइति तिसृभिः प्रजापते न त्वेदतान्यन्य इति च व्याहृतिभिर्वा। समुच्चयमेके**''- १.४.१,३-५ के अनुसार चौल, उपनयन, गोदान=समावर्त्तन तथा विवाह इन चार कर्मों में '**अग्न आयूंषि पवस.**' ये तीन (+ **अग्निर्ऋषिः पवमानः.** + **अग्ने पवस्व स्वपा.**) तथा **प्रजापते न त्वद्.** इन चार मन्त्रों से आज्याहुति दे अथवा- '**भूर्भुवः स्वः**' इन व्याहृतियों से दे अथवा कुछ आचार्य व्याहृति का मन्त्र के साथ समुच्चय कर चार आहुति मानते हैं। महर्षि ने '**समुच्चयमेके**' इस सूत्रपक्ष को स्वीकार कर व्याहृति का मन्त्र के साथ समुच्चय कर आहुति विधिान किया है। अतः 'भूर्भुवः स्वः' व्याहृतिपूर्वक 'अग्न आयूंषि.' आदि चार मन्त्रों से चार आहुति देना पूर्णतः शास्त्रमूलक है।

२. आपकी दूसरी शङ्का है कि '**भूर्भूवः स्वः। अग्न आयूंषि...**' आदि चार आहुतियां सामान्य प्रकरण में तो अष्टाज्याहुतियों (**त्वन्नो अग्ने...**आदि) से पूर्व लिखी हैं, किन्तु महर्षि ने चौल आदि में इन्हें अष्टाज्याहुतियों के उपरान्त देने का विधान किया है। इन्हें कहाँ पर दें? इससे पूर्व भी समाधान करते समय स्पष्ट किया था कि सामान्य प्रकरणोक्त विधि अन्य संस्कारों में शब्दानुपूर्वी पूर्वक नहीं की जाती है। समस्या ही तब उत्पन्न होती है, जब हम यह मान लेते हैं कि सामान्य प्रकरण की शब्दानुपूर्वी नियतानुपूर्वी

है। वास्तव में सामान्यप्रकरण में मुख्य-मुख्य विधि का निर्देश मात्र है और वह भी संक्षेप में। वैसे भी प्रधान होम की आहुतियां कहाँ देनी चाहिएं? यह जानना भी अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए संस्कार के प्रधान भाग का ज्ञान अपेक्षित है। प्रत्येक संस्कार के प्रधान भाग में ही प्रधान होम की आहुति दी जाती हैं।

सूत्रकार उस/उन प्रधान आहुतियों को '**आवाप**' नाम से सम्बोधित करते हैं। यहां यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जिस स्थान पर ये आहुतियां दी जाती हैं उस स्थान की भी 'आवाप' संज्ञा है। तद्यथा- ''**अन्तरेणाज्यभागौ स्विष्टकृतं च यदिज्यते तमावाप इत्याचक्षते तत्प्रधानम्। तदङ्गानीतराणि**''- शां. श्रौ. १.१६.३-४ अर्थात् आज्यभागाहुती और स्विष्टकृत् आहुति के मध्य का भाग 'आवाप' है, वही प्रधान है, शेष अङ्ग हैं। इस प्रकार प्रधान होम की आहुतियों का स्थान आज्यभागाहुती के अनन्तर स्विष्टकृत् आहुति के पूर्व है। स्विष्टकृत् अन्त्य आहुति है। महर्षि ने भी इन 'भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूंषि' आदि चार मन्त्रों को प्रधान होम की आहुति में विनियुक्त किया है। इसलिए इनका स्थान भी प्रधान होम का स्थान ही होगा। वैसे यह स्मरण रखना चाहिए कि प्रत्येक सूत्रकार संस्कारों में मन्त्रों का विनियोग अपनी-अपनी दृष्टि से करते हैं। इसलिए एक सूत्रकार जिस क्रिया में जिस मन्त्र का विनियोग करता है, दूसरा उसी क्रिया में दूसरे मन्त्र का विनियोग करता है। बहुत थोड़े मन्त्र हैं, जो समान रूप से सभी ने एकसमान विनियुक्त किए हों। पारस्कर गृह्यसूत्रकार ने तो इन चारों मन्त्रों में से किसी भी मन्त्र का विनियोग किसी भी संस्कार में नहीं किया है। इसलिए इन चारों आहुतियों को महर्षि कथन के आधार पर प्रधान होम में आवाप स्थान (स्विष्टकृत् से पूर्व) देना पूर्णतः शास्त्रसम्मत है।

३. कर्मकाण्ड में मन्त्रों का विनियोग महत्त्वपूर्ण विषय है। यदि मन्त्रार्थ को जाने बिना केवल शब्द साम्य के आधार पर (जैसा कि प्रायः पौराणिक कर्मकाण्ड में हो रहा है।) विनियोग होगा, तो वह कहीं न कहीं हास्यास्पद होगा ही। इस प्रकार के अनेक उदाहरण हैं, जहाँ केवल शब्द को आधार मानकर विनियोग हुआ है, किन्तु उसे उचित ठहराना कठिन है। महर्षि की विनियोग के विषय में अपनी आर्ष दृष्टि है, उसे दूसरे विनियोक्ताओं के मापदण्ड पर कसकर देखना उचित नहीं है। महर्षि ने जिस मन्त्र का जहां विनियोग किया है, वह बहुत ही विवेकपूर्ण तथा मन्त्रार्थ को दृष्टिगत रखकर किया है। सम्पूर्ण कर्मकाण्ड को समझे बिना उसकी समीक्षा या समालोचना अथवा सन्देह करना उचित नहीं है।

अतः महर्षि ने जहाँ जिन मन्त्रों का विनियोग किया है, वहीं उन मन्त्रों से आहुति प्रदान आदि तत्तत् कर्म करना चाहिए-

४. आपकी चतुर्थ शङ्का का समाधान पूर्व शङ्काओं के समाधान के अन्तर्गत है। पुनरपि यह ध्यान रखना चाहिए कि-यदि आप शब्दानुपूर्वी= यह शब्द पहले तथा यह शब्द उसके बाद है, तो क्रिया या विधि भी उसी क्रम से होगी को निश्चित मानकर चलेंगे। जैसे चूड़ाकर्म के विधि भाग को देख लें, तब क्या शब्दानुपूर्वी को नियतानुपूर्वी मान लेने पर उचित व्यवस्था बन पाएगी?

साधारण सी बात है कि उस समय कर्त्तव्य कर्मों का उल्लेख यहां किया गया है। इस प्रकार के स्थलों पर समाधान की दिशा कात्यायन का निम्न सूत्र प्रदर्शित कर रहा है- ''**विरोधेऽर्थस्तत्परत्वात्**''- का. श्रौ. १.५.५ अर्थात् इस प्रकार की स्थिति में जहां पूर्वापर विरोध दिखाई दे, वहां अर्थ को महत्त्वपूर्ण मानकर कार्य सम्पन्न कर लेना चाहिए।

स्विष्टकृत् का स्थान- पारस्कर गृह्यसूत्र १.५.३-५ के अनुसार स्विष्टकृत् अन्त में है। गोभिल गृह्यसूत्र-१.८.१६ में- '**प्राक् स्विष्टकृत आवापः**' स्विष्टकृत् से पूर्व आवाप कहा गया है अर्थात् स्विष्टकृत् अन्त में है। शां. श्रौ. १.१६.३-४ ऊपर उद्धृत किया जा चुका है। स्विष्टकृन्मन्त्र- ''यदस्य कर्मणः...'' आश्व. गृ. १.१०.२२ के अर्थ से स्पष्ट है कि मन्त्रगत प्रार्थना का औचित्य भी अन्त में ही है। वैसे भी स्मार्त्त कर्म की प्रक्रिया आज्याहुती से प्रारम्भ तथा स्विष्टकृत् अन्त है। महर्षि का विधान शास्त्रानुकूल तथा मन्त्रार्थनुसारी है।

मनुष्यों को चाहिये कि सदा यज्ञ का आरम्भ और समाप्ति को करें और संसार के जीवों को अत्यन्त सुख पहुँचावें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६२

एक नररत्न ओमप्रकाश वर्मा चल बसे

राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

श्री पं. इन्द्रजित् जी ने यह दुःखद सूचना दी है कि आर्यसमाज के एक लोकप्रिय अद्भुत भजनोपदेशक और ओजस्वी वक्ता श्री पं. ओमप्रकाश जी वर्मा चल बसे हैं। वह लम्बे समय से रुग्ण चल रहे थे, सो लग ही रहा था कि वह अब किसी भी समय जा सकते हैं। ऐसे गुणसम्पन्न वैदिक मिशनरी का निधन मेरे लिये तो एक बहुत बड़ा आघात है। सारे आर्यजगत् में उनका सबसे पुराना साथी-संगी और मित्र होने का मुझे ही गौरव प्राप्त है। मैं सन् १९४८ से उनकी कीर्ति सुन रहा था और सन् १९५५ से मेरी उनकी घनिष्ठता बढ़ती गई। पाठकों को यह जानकर आश्चर्य नहीं होना चाहिये कि मैंने और उन्होंने निरन्तर साठ वर्ष तक देशभर में वैदिक धर्म प्रचार किया। मैं उनके जीवन की कौन-कौन सी घटना व प्रेरक प्रसंग दूँ।

वर्तमान में आर्यसमाज के सर्वश्रेष्ठ संगीतज्ञ, निडर ओजस्वी वक्ता, वैदिक सिद्धान्तों पर सूझबूझ से बोलने वाले इस प्रभावशाली सुवक्ता की दो-चार दस-बीस नहीं पचासों शिक्षाप्रद घटनायें इस समय मेरे नयनों के सामने ऐसे घूम रही हैं कि मानो यह अभी कल की बात है। आपका आर्यसमाज की पहली पीढ़ी के नेताओं तथा विद्वानों को छोड़कर प्रायः सब बड़े-बड़े नेताओं व विद्वानों से सम्बन्ध और सम्पर्क रहा यथा पं. लेखराम जी, पं. गुरुदत्त जी, ताऊ चन्दूलाल, न्यायमूर्ति केशवराव, स्वामी श्रद्धानन्द जी को छोड़कर आपने प्रायः सबके दर्शन किये।

भूमण्डल प्रचारक मेहता जैमिनि पं. गुरुदत्त जी के पश्चात् के सबसे पुराने और विख्यात विद्वान् थे। आपको उनके साथ भी प्रचार करने का सौभाग्य प्राप्त रहा और किस-किस का नाम लूँ और छोड़ूँ? पं. लेखराम जी के पश्चात् सबसे बड़े और लोकप्रिय शास्त्रार्थ महारथी पं. रामचन्द्र जी देहलवी की आप पर बहुत कृपा रही। वाणी के जादूगर कुँवर सुखलाल जी और पं. सन्तराम पुरी के साथ आपने काम किया।

पूजनीय स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, महाराज वेदानन्द जी की कोटि के विद्वान् महात्माओं की छत्रछाया में आपने कार्य किया और उनका भरपूर प्यार और आशीर्वाद आपको प्राप्त रहा। कविरत्न प्रकाश जी, पं. शान्तिप्रकाश जी, पं. ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु, आचार्य उदयवीर जी, पं. ईश्वरचन्द्र जी दर्शनाचार्य, पं. नरेन्द्र जी हैदराबाद, पं. शिवकुमार जी शास्त्री, ठाकुर अमरसिंह, स्वामी सत्यप्रकाश जी, स्वामी सर्वानन्द जी सभी के साथ कार्य करते हुये आपने यश प्राप्त किया। दीवान बद्रीदास, महाशय कृष्ण, पं. ठाकुरदत्त शर्मा के नेतृत्व में समाज-सेवा के कई कीर्तिमान बनाये।

किस-किस का नाम लूँ और किस-किस को छोड़ूँ। मेरी स्थिति इस समय यह है-

इतना पुराना किस्सा कैसे यहाँ बताऊँ?
सब याद है यहाँ से, सब याद है वहाँ से।

आओ! कुछ शिक्षाप्रद प्रसंग आपकी सेवा में रखूँ। गुरुदत्त भवन लाहौर में कई विद्वान्, प्रचारक, उपदेशक स्वामी वेदानन्द जी महाराज को घेरे बैठे थे। हर कोई अपने-अपने प्रश्न का उत्तर पूछ रहा था। सबसे अन्त में वर्मा जी ने एक विचित्र प्रश्न पूछकर सबको चौंका दिया। प्रश्न भी कमाल का था और उत्तर उससे भी कमाल का था। प्रश्न यह पूछा गया, ''आप १४-१५ भाषायें जानते हैं। आर्य साहित्य का तो आपको गम्भीर और व्यापक ज्ञान है। मत-पन्थों के आप मर्मज्ञ हैं। आप यदि ऋषि जी के समय उनको मिल जाते तो आप जैसा प्रकाण्ड विद्वान् शिष्य पाकर ऋषि को आप पर कितना अभिमान होता?''

स्वामी वेदानन्द जी ने सूझबूझ से पूछे गये इस प्रश्न के उत्तर में बड़ी विनम्रता तथा विद्वत्ता से कहा, ''नहीं! ऋषि मुझे पाकर अभिमान तो नहीं करते। हाँ! मुझे अपने चरणों में बैठने का अधिकार तो यह कहकर देते कि यह कुछ सुनता और समझता है।''

ऋषिभक्ति के रंग से रंगा विद्वत्तापूर्ण यह उत्तर स्वामी जी की विनम्रता और बड़प्पन का शिक्षादायक उदाहरण है।

एक बार विद्वान् उपदेशक इसी प्रकार पूज्यपाद स्वामी श्री स्वतन्त्रानन्द जी महाराज से बारी-बारी प्रश्न पूछ रहे थे।

एक विद्वान् ने पूछा, ''ईसाई की परिभाषा क्या है? दूसरे ने मुसलमान की पूछ ली।'' स्वामी जी एक-एक के प्रश्न का उत्तर देते गये। वर्मा जी भला पीछे क्यों रहते। आपने पूछा, ''स्वामी जी! आर्यसमाजी की भी आप परिभाषा कर दीजिये।''

स्वामी जी ने कहा, ''**आर्यसमाजी उसे कहना चाहिये जो जब तक झूठे को निरुत्तर करके चुप न करवा दे, उसके घर तक पीछा करता जावे।**''

वर्मा जी की लगन- पं. नरेन्द्र जी ने आपसे अपनी सभा के लिये एक मास का समय माँगा। आप दक्षिण की सब समाजों में लोकप्रिय थे ही। हैदराबाद पहुँचते इन्हें आर्यसमाज उदगीर का कार्यक्रम देकर वहाँ भेज दिया। वहाँ सब जन इन्हें जानते ही थे। वर्मा जी ने अधिकारियों को रात्रि से प्रचार करवाने को कहा। पण्डित नरेन्द्र जी का पत्र भी उन्हें मिल चुका था। मन्त्री प्रधान ने सुनी-अनसुनी करके प्रचार की कोई व्यवस्था न की। वर्मा जी ने स्वयं ही लाउडस्पीकर एक रिक्शा में रखवाकर सारे प्रमुख बाज़ारों गलियों में सूचना दी कि रात्रि को आर्यसमाज मन्दिर में पं. ओमप्रकाश जी वर्मा के मधुर भजन और वेद-प्रवचन होगा। आप सब समय पर पहुँचकर लाभ उठावें।

ठीक समय पर वर्मा जी ने लाउडस्पीकर लगवाकर प्रचार आरम्भ कर दिया। आर्यसमाज मन्दिर में भारी भीड़ थी। मन्त्री जी के कानों तक वर्मा जी के गीतों की तान सुनाई दी तो दुकान झट से बन्द करके वह भी पहुँच गये। पं. नरेन्द्र जी तक सारे कार्यक्रम की पूरी रिपोर्ट किसी साधन से पहुँच गई। आप उदगीर से हैदराबाद लौटे तो प्राप्त रिपोर्ट की चर्चा करके, पण्डित जी ने सफल प्रचार पर आपकी भूरि-भूरि प्रशंसा की।

जब निजाम ने पं. नरेन्द्र जी से विनती की- हैदराबाद के अन्तिम निजाम उस्मान ने अपनी मृत्यु से थोड़ा समय पहले अपना एक व्यक्ति भेजकर पं. नरेन्द्र जी से बहुत विनम्रता से मिलने की विनती की। पण्डित जी भी जानते थे कि अब उसकी अन्तिम वेला बहुत निकट है। पं. नरेन्द्र जी ने उसे स्वीकृति दे दी कि मैं मिलने आऊँगा।

उस घड़ी वर्मा जी पण्डित जी के पास ही बैठे थे। निज़ाम के दूत के जाते ही वर्मा जी ने पण्डित जी से कहा, ''मैं आप को जाने नहीं दूँगा। आप जीवनभर निज़ामशाही का जी-जान से विरोध करते रहे। क्या पता, यह कोई षड्यन्त्र हो। मैं आपको जाने नहीं दूँगा। हो सकता है वह आपकी हत्या करवा दे।''

पण्डित जी ने कहा, ''आप ऐसा मत सोचें। मुझे कुछ नहीं होगा। मैं जाऊँगा।'' वर्मा जी ने कहा, ''फिर अकेले मत जावें। मैं साथ जाऊँगा।'' पण्डित जी वर्मा जी को लेकर निजाम के राजभवन पहुँच गये। उसने आदरपूर्वक पण्डित जी का स्वागत किया। करजोड़ नमस्ते की और पण्डित जी को दबाने, सताने और मिटाने के अपने सब दुष्कर्मों व पापों को क्षमा करने की प्रार्थना की। कहा, ''मेरे लिये भगवान् से दुआ (प्रार्थना) कीजिये।''

पण्डित जी ने कहा, ''मैंने देश-जाति, प्रजा के भले में संघर्ष किया। मैंने तभी आपको क्षमा कर दिया...।''

वर्मा जी ही कार्यक्रम करवा सकते हैं- करनाल जिला के तंगौड़ ग्राम (डॉ. रामप्रकाश का जन्मस्थान) में पं. शान्तिप्रकाश जी तथा कई विद्वान्, भजनोपदेशक पहुँच गये। वहाँ एक प्रभावशाली बाहुबली आर्यसमाज का प्रचार नहीं होने देता था। पं. शान्तिप्रकाश जी ने दृढ़ता से कहा, ''प्रचार होकर रहेगा।'' पं. तेजभानु जी भजनोपदेशक को साइकिल पर दूर एक ग्राम में भेजा। वर्मा जी वहाँ प्रचार कर रहे थे। कहा, ''उन्हें जैसे-कैसे लेकर आओ। उनके आने पर हमारा प्रचार अवश्य होकर रहेगा।'' वर्मा जी पहुँच गये। उनके मधुर गीतों व ओजस्वी व्याख्यान को सुनकर तंगौड़ का उत्सव सफलता से सम्पन्न हुआ।

पठानकोट का वह उत्सव- सन् १९५४ में आर्यसमाज पठानकोट का वार्षिक उत्सव खुले में हो रहा था। कई विद्वान्, संन्यासी और भजनोपदेशक आमन्त्रित थे। मैं भी दर्शक के रूप में सभा में उपस्थित था। भारी भीड़ थी। उन दिनों पंजाब सभा के एक कवि का एक गीत कॉलेज के युवकों के सम्बन्ध में अत्यन्त लोकप्रिय था-

''**कॉलेज में गुजारा नहीं होता माय लॉर्ड**''

यह गीत कॉलेज के बिगड़े छात्रों पर एक तीखा व्यंग्य था। सब नगरों में कॉलेजों के लड़के इस गीत को ही सुनाने की माँग करते देखे गये। पठानकोट में रात्रि कार्यक्रम आरम्भ करने में कॉलेज के लड़कों के समूह ने बड़ा विघ्न

डाला। वे वहाँ अड़ गये कि पहले वर्मा जी के गीत करवाये जावें और वर्मा जी यह गीत अवश्य सुनावें। बड़ी विचित्र स्थिति थी। सेठ कुलदीपचन्द जी प्रधान नगर के माननीय नेता थे। उद्दण्ड छात्रों की माँग मानकर वर्मा जी के भजन पहले करवाने पड़े।

वर्मा जी की ओजस्वी मधुर वाणी से यह गीत नगर निवासियों ने सुना, **''कॉलेज में गुजारा नहीं होता माय लॉर्ड''** सारा नगर वर्मा जी की आवाज से गूञ्ज उठा। गीत में उद्दण्ड छात्रों के लिये सन्देश भी था, उपदेश भी था और कुचालों पर व्यंग्य भी था। किसी भी कार्यक्रम में वर्मा जी की उपस्थिति सफलता की पक्की गारण्टी होती थी। शेष फिर कभी...।

तड़फिले आर्य भजनोपदेशक
श्री ओमप्रकाश वर्मा आर्योपदेशक (अलाहर, यमुनानगर)

इन्द्रजित् देव, यमुनानगर
प्रस्तुति- अमित सिवाहा

दीपक पर जलने का मजा, ये दीपक के परवाने से पूछ और क्या मजा ईश्वर भक्ति में है, ये ईश्वर के दीवाने से पूछ, कौन कहता है मुलाकात नहीं होती, रोज मिलते हैं पर बात नहीं होती।

प्रिय पाठकवृन्द! आर्यसमाज के भजनोपदेशकों ने, विद्वानों ने आर्यसमाज का वो काम किया है जो चिरस्मरणीय है। जिन लोगों ने अपना इतिहास बना दिया आज उन लोगों की ख्याति है। हरियाणा की इस पावन भूमि ने भी आर्यसमाज को सैकड़ों भजनोपदेशक दिये। हरियाणा के यमुनानगर जिले के गाँव अलाहर (रादौर) से चार भजनोपदेशक हुए हैं। इन्हीं में से एक पं. ओमप्रकाश वर्मा जी ने अपने प्रचार से आर्यसमाज की अत्यन्त धूम मचाई है। पं. जी की संघर्षमय जीवन की एक झाँकी प्रस्तुत है।

जन्म

पं. ओमप्रकाश वर्मा जी का जन्म गाँव अलाहर जिला यमुनानगर में सन् १९३० ई. में श्री प्रभुदयाल जी व श्रीमती शंकरा देवी जी के यहाँ हुआ। पं. जी को पाठशाला में पढ़ते समय ही प्रात:काल गाना अच्छा लगता था। गाँव अलाहर में संगीत व गायन का प्रचार तो था ही। गाँव में आर्यसमाज के प्रधान श्री मौलुराम जी थे, वह न केवल वाद्ययन्त्र बनाते थे अपितु उन्हें बजाते भी थे। गाँव में कुछ मुस्लिम कोठीवाली रहती थीं, वो अच्छा गायन करती थीं, जिनका मुकाबला आर्यभजनोपदेशकों के साथ रहता था। संगीतमय वातावरण के चलते पं. जी की रुचि गायन की तरफ बढ़ती चली गई। उस समय ध्रुपद १२ मात्रा के गायन का अधिक रिवाज था।

भजनोपदेशक की प्रेरणा

पं. बुद्धदेव विद्यालंकार जी ने सन् १९४५ ई. में पं. जी का भजन सुनकर उन्हें संगीत का प्रशिक्षण प्राप्त करने की प्रेरणा दी। यह मार्च ३१ मार्च १९४५ की घटना है। पं. जी दौराला जिला मेरठ के समोली गाँव में गए। वहाँ श्री धूमसिंह के गुरुत्व में पं. जी ने गायन का विधिवत् प्रशिक्षण लिया था। उन्होंने अपने गाँव में भजनोपदेशक विद्यालय चलाया था। हारमोनियम बजाना इत्यादि यहीं से सीखा था। तत्पश्चात जालन्धर के पण्डित मंगतराम जी के पास चले गए। उनका जालन्धर में शास्त्रीय संगीत का विद्यालय था। वह शास्त्रीय संगीत के अच्छे गायक थे। पण्डित जी ने शास्त्रीय संगीत वहीं से सीखा।

प्रचार की शुरुआत

यह बात सन् १९४६ की है। प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद पंजाब आर्यप्रतिनिधि सभा के श्री ठाकुरदत्त, व पं. बुद्धदेव विद्यालंकार ने पण्डित जी को सभा में भजनोपदेशक के रुप में नियुक्त किया। आरम्भ में पण्डित जी को अम्बाला मण्डल का कार्यभार सौंपा गया। तब सभा में २०० भजनोपदेशक व उपदेशक थे। पण्डित जी ने बताया उस समय हमारी सभा के जीन्द मण्डल के प्रचार अधिकारी थे-श्री पण्डित समरसिंह वेदालंकार, एम.एल.ए.। वे सींखपाथरी के रहनेवाले थे। इनके अतिरिक्त पं. बुद्धदेव,

पं. रामस्वरुप पाराशर, पं. शिवकुमार शास्त्री, पं. शांतिप्रकाश शास्त्रार्थ महारथी, स्वामी पूर्णानन्द, मौलाना सत्यदेव मुरादाबादी, पं. मुनीश्वरदेव, पं. रामदत्त गौतम, पं. भूदेव मुजफ्फरनगर वाले, त्रिदर्शन केसरी, पं. हरपाल शास्त्री, स्वामी सुधानन्द, स्वामी अनुभवानन्द, स्वामी सुरेशानन्द, स्वामी स्वतन्त्रानन्द, आचार्य प्रियव्रत आदि अच्छे-अच्छे प्रभावशाली तथा चरित्रवान् उपदेशकों का सहयोग मिलता रहा। पण्डित बलराज जी (फिल्लोर) पं. भक्तराम अलाहर, पं. हरिश्चन्द्र, पण्डित आशानन्द, पण्डित तेजभानु सोनीपत, पं. ब्रह्मानन्द चिमटा मण्डली, पं. वीरेन्द्र वीर शामली, पं.अमरनाथ प्रेमी स्यालकोट, पं. नन्दलाल जालन्धर, पं. हजारीलाल, पं. अमर सिंह, श्री जगतराम अलाहर, श्री भद्रपाल संगीत विशारद, पं. तेजपाल अनेक प्रसिद्ध भजनोपदेशकों के साथ प्रचार करते रहे हैं।

तड़फिले भजनोपदेशक

बहुत पुरानी बात है। देश का विभाजन अभी हुआ ही था। करनाल जिला के तंगौड़ ग्राम में आर्यसमाज का उत्सव था। पं. शान्तिप्रकाश शास्त्रार्थ महारथी, पण्डित मुनीश्वरदेव आदि कई मूर्धन्य विद्वान तथा पण्डित तेजभानु भजनोपदेशक वहाँ पहुँचे। प्रचार में पण्डित ओमप्रकाश वर्मा की कमी खल रही थी। पण्डित शान्तिप्रकाश ने पण्डित तेजभानु (सोनीपत) को रातों रात वहाँ से साइकिल पर भेजा। पण्डित ओमप्रकाश वर्मा शाहबाद के आस-पास ही कहीं प्रचार कर रहे थे। पण्डित तेजभानु रात को वहाँ पहुँचे। वर्मा जी को बिठाकर तंगौड़ पहुँचे। वर्मा जी व तेजभानु जी के ओजस्वी भजन सुनकर जनता आनन्दमय हो गई। लोगों ने इनके बाद विद्वानों को भी बड़ी श्रद्धा से सुना।

प्रत्येक आर्य को अपने ह्रदय से यह प्रश्न पूछना चाहिये कि क्या ऋषि के वेदोक्त विचारों के प्रसार के लिये हममें पण्डित तेजभानु एवं पं. ओमप्रकाश वर्मा जैसी तड़फ है? क्या आर्यसमाज की शोभा के लिये हम दिन-रात एक करने को तैयार हैं।

श्री ओमप्रकाश वर्मा की यह लगन हम सबके लिये अनुकरणीय है। इस घटना को इतिहास शिरोमणि श्री राजेन्द्र जिज्ञासु तड़फवाले तड़फाती जिनकी कहानी में जिक्र करते हैं। पण्डित जी सन् १९६६ में आर्यप्रतिनिधि सभा से त्यागपत्र देकर स्वतन्त्र रुप से प्रचार करने लग गए।

हिन्दी आन्दोलन में जेल-यात्रा

सन् १९५७ में आर्यसमाज ने मंगल हिन्दी रक्षा आन्दोलन चलाया था, उस आन्दोलन में पण्डित जी ने सक्रिय भाग लिया। तीन मास तक अम्बाला सेन्ट्रल जेल में रहे। वहाँ पण्डित जी के साथ श्री रामनारायण शास्त्री बिन्दकी ,श्री पूर्णचन्द मुख्याध्यापक, श्री दिलीप चन्द, श्री शिवदयालु (तीनों पठानकोटवासी) श्री ब्रह्मचारी सत्यप्रिय लाड़वा, पं. जियालाल, पं. नन्दलाल, श्री आर्य भिक्षु आदि पण्डित जी के साथी थे। पण्डित जियालाल आर्यवीर बन्दीगृह में पण्डित जी के भजनों से अत्यन्त प्रभावित होते थे। इसी कारण उन्होंने पण्डित जी को अजमेर एक कार्यक्रम में बुलाया था।

अजमेर कार्यक्रम

तत्कालीन राजस्थान की आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान पं. जियालाल कारागार में पण्डित ओमप्रकाश के साथ रहते थे, वह पण्डित जी के भजनों से काफी प्रभावित हो गए। कारागार से छूटने के बाद उन्होंने आर्यसमाज केसरगंज, अजमेर में पण्डित जी को एक उत्सव में आमन्त्रित किया। उस उत्सव में ७६ भजन मण्डलियाँ आई हुईं थीं। नगर-कीर्तन जब निकला तो सभी का आकर्षण था, परन्तु पूरे कार्यक्रम में ४ विशेष व्यक्तियों का असाधारण प्रभाव श्रोताओं पर पड़ा। ये थे- पं. रामचन्द्र देहलवी, कुंवर सुखलाल आर्यमुसाफिर, पं. नन्दलाल गाजीपुर और पण्डित ओमप्रकाश वर्मा। जब नगरकीर्तन निकल रहा था तो चिश्ती की दरगाह के आगे पहुँचने पर पण्डित जी ने एक गजल गाई, जिसका प्रभाव काफी लोगों पर हुआ। एक पाकिस्तानी गजलकार ने तब एक गजल लिखी थी जो पाकिस्तान में काफी प्रसिद्ध हुई थी। उसकी एक पंक्ति इस प्रकार थी।

ए गुलम ए हैदर ए करार चल, कश्मीर चल।

इसका उत्तर ठा. उदयसिंह ने अपनी गजल में यूँ दिया था।

ठोकर से सब झाड़ दें तेरे सब कश्मीर ए ख्वाब।
हुक्म दे दे नेहरु की सरकार चल।।

पण्डित जी द्वारा अजमेर में गाई इस गजल का अजमेरवासियों पर तथा बाहर से आये आर्यों पर विशेष

प्रभाव पड़ा। भिनाय की कोठी में रह रहे स्वामी प्रेमानन्द जी तथा डॉ. श्री गोपाल जी बाहेती एम.एल.ए. भी अत्यन्त प्रभावित हुए तथा वे इसे गाते रहे।

पण्डित जी ने बताया इस जीवन में मैं महर्षि दयानन्द का अनुयायी बना तथा उनके द्वारा पुनः प्रतिष्ठित वैदिक धर्म का प्रचार करने में मेरा जीवन व्यतीत हो रहा है। मैं इसी प्रकार प्रचार कार्य करते-करते धन्य बना रहना चाहता हूँ। आर्यसमाज ने मुझे बहुत कुछ दिया है मान-सम्मान, यश, ज्ञान आदि। आर्यसमाज में भजनोपदेशकों के अभाव पर भी पण्डित ओमप्रकाश वर्मा जी ने प्रकाश डाला था।

पण्डित ओमप्रकाश वर्मा जी कल यानि २५/०५/२०२१ को ९० वर्ष की अवस्था में प्रभु को प्यारे हो गए। परमपिता परमात्मा पण्डित जी की आत्मा को सद्गति प्रदान करें। आप जैसे सैकड़ों उपदेशकों व भजनोपदेशकों का गौरवान्वित व प्रेरक इतिहास रहा है। हमें आप पर गर्व है। पूज्य पण्डित जी के आदर्श जीवन को नमन। वैदिक धर्म की जय।

-यमुनानगर

वैदिक पुस्तकालय द्वारा प्रकाशित नया साहित्य

१. महर्षि दयानन्द के शास्त्रार्थ **पृष्ठ :** २१६ **मूल्य :** १५०

यह पुस्तक महर्षि के सभी शास्त्रार्थों का संग्रह है। यद्यपि सभा यह संग्रह दयानन्द ग्रन्थमाला में भी प्रकाशित कर चुकी है, पुनरपि पाठकों की सुविधा के लिए इसे पृथक पुस्तक रूप में भी प्रकाशित किया गया है।

२. महर्षि दयानन्द की आत्मकथा **पृष्ठ :** ८० **मूल्य :** ३०

महर्षि दयानन्द ने अलग-अलग समय व अवसरों पर अपने जीवन सम्बन्धी विवरण का व्याख्यान किया है। जिनमें थियोसोफिकल सोसाइटी को लिखा गया विवरण, भिड़े के बाड़े में दिया गया व्याख्यान एवं हस्तलिखित विवरण आदि हैं। इन सभी विवरणों को ऋषि के हस्तलिखित मूल दस्तावेजों सहित सभा ने एकत्र संकलित किया है।

३. काल की कसौटी पर **पृष्ठ :** ३०४ **मूल्य :** २००

यह पुस्तक डॉ. धर्मवीर जी द्वारा लिखित सम्पादकीय लेखों का संकलन है। विषय की दृष्टि से इस पुस्तक में उन सम्पादकीयों का संकलन किया गया है, जिनमें धर्मवीर जी ने आर्यसमाज के संगठन को मजबूत करने एवं ऋषि के स्वप्नों के साथ-साथ उन्हें पूरा करने का मन्त्र दिया है।

४. कहाँ गए वो लोग **पृष्ठ :** २८८ **मूल्य :** १५०

आर्यसमाज या आर्यसमाज के सांगठनिक ढांचे से बाहर का कोई भी ऐसा व्यक्ति जो समाज के लिए प्रेरक हो सकता है, उन सबके जीवन और ग्रहणीय गुणों पर धर्मवीर जी ने खुलकर लिखा है। उन सब लेखों को इस पुस्तक के रूप में संकलित किया गया है।

५. एक स्वनिर्मित जीवन - मास्टर आत्माराम अमृतसरी **पृष्ठ :** १७४ **मूल्य :** १००

आर्यसमाज के आरम्भिक नेताओं की सूची में मास्टर आत्माराम अमृतसरी का नाम प्रमुख रूप से आता है। प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु द्वारा लिखी अमृतसरी जी की यह जीवनी पाठकों को आर्यसमाज के स्वर्णयुग से परिचित कराएगी।

आर्ष ग्रन्थों का पठन

महर्षि लोगों का आशय, जहाँ तक हो सके वहाँ तक सुगम और जिसके ग्रहण में समय थोड़ा लगे इस प्रकार का होता है और क्षुद्राशय लोगों की मनसा ऐसी होती है कि जहाँ तक बने वहाँ तक कठिन रचना करनी जिसको बड़े परिश्रम से पढ़के अल्प लाभ उठा सकें, जैसे पहाड़ का खोदना, कौड़ी का लाभ होना और अन्य ग्रन्थों का पढ़ना ऐसा है कि जैसा एक गोता लगाना, बहुमूल्य मोतियों का पाना।

नम्रता एवं सरलता की प्रतिमूर्ति थे हमारे आचार्य जी

ब्र. प्रताप आर्य

जन्म यदि हुआ है तो मृत्यु भी अवश्यम्भावी है। यह प्रकृति का नियम है कि मनुष्य जन्म लेता है, युवा होता है, वृद्ध होता है, अपने कर्मों से समाज में अपना स्थान बनाता है, फिर समय की अवधि पूर्ण होने के बाद महायात्रा पर चला जाता है। समाज के लिए कुछ अच्छा करके जाने वालों को समाज याद करता है। जिनका व्यक्तित्व समाज में अमर हो जाता है, ऐसे ही कुछ लोगों की नामावली में आचार्य घनश्याम जी भी थे।

आर्यजगत् के संस्कृत साहित्य के प्रख्यात् विद्वान् आचार्य घनश्याम जी के आकस्मिक निधन से मन अति दुःखित हुआ। हम सबका दुर्भाग्य है कि हमने ऐसे व्यक्तित्व को खो दिया, जिनकी विद्वत्ता, व्यवहार-कुशलता, वाक्पटुता, सरलता, विनम्रता, सहजता, मधुर स्वभाव आदि अनेक गुणों से आर्यजगत् भलीभांति परिचित है। वे अब हमारे बीच नहीं रहे, इस कोरोना महामारी ने हमें उनकी अन्तिम यात्रा में भी सम्मिलित होने नहीं दिया। कुछ समय से कोरोना संक्रमण से पीड़ित होने के कारण १४ मई २०२१ को उन्हें अस्पताल में भर्ती करा दिया गया, सायंकाल भ्राता प्रभाकर जी भोजन ले गए, उन्होंने अच्छी प्रकार खाया भी और बोले... 'मैं स्वस्थ हूँ, अब ठीक लग रहा है।' रात्रि १० बजे माता ज्योत्स्ना जी ने वार्ता की, अच्छी प्रकार बोल रहे थे, बोले 'मैं ठीक हूँ, कोई चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।' रात्रि को ही उनके पुत्र एवं भतीजे ऋषि उद्यान पहुँच गए। प्रातः ६ बजे आचार्य जी को दूरभाष किया, परन्तु अच्छी प्रकार वार्ता नहीं हो पाई, बोले 'बाद में बात करता हूँ।' लगभग प्रातः ९.३० बजे अस्पताल से सूचना मिली कि आचार्य जी की स्वास्थ्य स्थिति अचानक गम्भीर हो गई है तथा कुछ ही देर बाद उनके निधन की भी सूचना मिल गई। १५ मई २०२१ का वह दिन, जिसने हमसे हमारे आचार्य जी को छीन लिया। ऐसा लग रहा था मानो चारों ओर का वातावरण ही विलाप कर रहा है।

आचार्य जी का जीवन अधिकतम गुरुकुलों में सेवा करते बीता। अध्ययन करते-कराते विद्यार्थियों को सदा आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते रहते थे। लगभग दो वर्षों से निरन्तर आप गुरुकुल ऋषि उद्यान में आचार्य के रूप में रहे, हम आपसे निरन्तर दो वर्षों से अध्ययन कर रहे थे। हम आप जैसे महामना आचार्य जी से पढ़कर कृतार्थ हो गए, परन्तु आप हमसे शीघ्र ही बिछुड़ गए, आपका व्यवहार हमें बहुत अच्छा लगता था। आपको कभी भी मैंने क्रोध में नहीं देखा, आपने हम सब विद्यार्थियों को पुत्रवत् प्यार दिया, मातृवत् स्नेह दिया, ऐसे आचार्य को हम जीवन भर नहीं भुला पाएंगे। आपने कभी भी डण्डे के बल पर कोई कार्य नहीं करवाया, अपनी बात को यों ही खुशी-खुशी मनवा लिया करते थे। शास्त्रकार कहते हैं-

नारिकेल समाकारा दृश्यन्ते सुहृज्जनाः।
अन्ये बदरिकाकाराः बहिरेव मनोहराः।।

अर्थात् सज्जन पुरुष नारियल के समान होते हैं, बाहर से कठोर, अन्दर से कोमल, जितने विनम्र थे बाहर से भी उतने ही विनम्र दिखते थे। और दुर्जन व्यक्ति बाहर से बेर के समान कोमल, अन्दर से गुठली के समान कठोर होते हैं, परन्तु आचार्य प्रवर अन्दर से सदा प्रसन्नचित रहते थे। हम बहुत शास्त्र क्यों ना जानते हों, कहते हों कि आत्मा अजर है, अमर है, नित्य है, पुनर्जन्म होता है, परन्तु जब अपना व्यक्ति चला जाता है, अपनत्व खो जाता है तो विवेक नहीं रहता। दुःख होगा ही, दुःख होना भी अति आवश्यक है। जिस व्यक्ति के आने पर व्यक्ति प्रसन्न नहीं होते हैं और जिस व्यक्ति के जाने पर, बिछुड़ने पर दुःखी नहीं होते हैं, ऐसे व्यक्ति का जन्म लेना व्यर्थ है। आचार्य जी यज्ञ के बाद प्रवचन करते थे, उनको इतना स्मरण था जिसका अनुमान लगाना भी असम्भव है। वे अपनी बात को अधिकांश दृष्टान्त से ही समझाया करते थे। महाभारत के श्लोक अन्य ग्रन्थों का स्वाध्याय वह नित्य किया करते थे। आर्यजगत् के विद्वानों की सूची क्रमानुगत उनके मस्तिष्क में हमेशा रहती थी। उनके विचारों को भी उद्धृत किया करते थे, ऐसे-ऐसे भी लोग हमारे देश में हुए हैं, आप भी प्रयास करो, बन जाओगे। ऐसा प्रोत्साहन उनका हमेशा

हमको मिलता ही रहता था। उनकी वाणी भी मधुर थी, वे कभी-कभी कविताएँ सुनाया करते थे तो मन विभोर हो जाया करता था। माता जी ने भी उनसे अनुरोध किया था पिछले कवियों की कविताओं को उनकी आवाज में रिकॉर्ड कर लिया जाये, जिससे लोगों को आचार्य जी के मधुर स्वर का आनन्द भी मिल जाय और हमारे कविओं तथा उनकी कविताओं की स्मृतियाँ भी बनी रहे। परन्तु आचार्य प्रवर का यह कार्य अधूरा ही रह गया। अन्त में मैं उनके प्रति श्रद्धावनत होकर परमात्मा से यही प्रार्थना करता हूँ कि हम उस महान् व्यक्तित्व के कुछ गुणों को ग्रहण कर सकें। यही हमारी सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी।

पढ़ाने में लाड़न नहीं करना योग्य है!

उन्हीं के सन्तान विद्वान्, सभ्य और सुशिक्षित होते हैं, जो पढ़ाने में सन्तानों का लाड़न कभी नहीं करते, किन्तु ताड़ना ही करते हैं, परन्तु माता-पिता तथा अध्यापक लोग ईर्ष्या, द्वेष से ताड़न न करें, किन्तु ऊपर से भय प्रदान और भीतर से कृपा दृष्टि रखें।

(सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास २)

आभूषण

सन्तानों को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण, कर्म और स्वभावरूप आभूषणों का धारण कराना माता, पिता, आचार्य और सम्बन्धियों का मुख्य कर्म है। सोने, चाँदी, माणिक, मोती, मूंगा आदि रत्नादि से युक्त आभूषणों के धारण कराने से मनुष्य का आत्मा सुभूषित कभी नहीं होता क्योंकि आभूषणों के धारण करने से केवल देहाभिमान, विषयासक्ति और चोर आदि का भय तथा मृत्यु का भी सम्भव है।

सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास

''उठो! जगमगाओ''

पं. भारतेन्द्रनाथ

गगन सूर्य बनकर नवल प्रातः लाओ।
अमर ज्योति बनकर उठो! जगमगाओ।।

घिरी है मही दानवी वृत्तियों से।
भरी मेदिनी दानवी व्यक्तियों से।
घनीभूत है तम गगन में जगत् के।
मनुज आचरण आज मानव न करते।

उठो तुम धरणि का अन्धेरा हटाओ।
अमर ज्योति बनकर उठो! जगमगाओ।।

मुखर हो उठी हैं अनैतिक कथाएँ,
बढ़ी जा रही हैं मनुज की व्यथाएँ,
दिशाओं में उठते रहे हैं करुण स्वर,
चढ़ा है मनुज में कटुक स्वार्थ का ज्वर,

चलो, इन कृतत्वों को अविरल हटाओ।
अमर ज्योति बनकर उठो! जगमगाओ।।

इस बात का निश्चय है कि ब्रह्मचर्य्य, उत्तम शिक्षा, विद्या, शरीर और आत्मा का बल, आरोग्य, पुरुषार्थ, ऐश्वर्य, सज्जनों का संग, आलस्य का त्याग, यम-नियम और उत्तम सहाय्य के विना किसी मनुष्य से गृहाश्रम धारा जा नहीं सकता।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.३१

जब तक मनुष्य सुख-दुःख, हानि और लाभ की व्यवस्था में परस्पर अपने आत्मा के तुल्य दूसरे को न जानते तब तक पूर्ण सुख को प्राप्त नहीं होते, इससे मनुष्य लोग श्रेष्ठ व्यवहार ही किया करें।

- महर्षि दयानन्द, यजु.,भा ५.४०

ÃÜáèÂ·¤æÚUè âÖæ ¥ÁÌ×ðÚU mæÚUæ Âý·¤æçàæÌ ÂéSÌ·¤æð´ ÂÚU çßàæðá ÀêUÅU

पुस्तक का नाम	**वास्तविक मूल्य रुपये**	**छूट के साथ मूल्य रुपये**
अष्टाध्यायी भाष्य (तीनों भाग)	५००	३५०
महर्षि दयानन्द सरस्वती का पत्र-व्यवहार (दोनों भाग)	८००	५००
कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर (दोनों भाग)	९५०	६००
डॉ. धर्मवीर का सम्पादकीय संकलन (तीन भाग)	५००	२५०
पण्डित आत्माराम अमृतसरी	१००	७०
महर्षि दयानन्द के शास्त्रार्थ	१५०	१००
वेद पथ के पथिक	२००	१००
महर्षि दयानन्द के हस्तलिखित-पत्र	२००	१००
स्तुतामया वरदा वेदमाता	१००	७०

यजुर्वेद भाष्य (महर्षि दयानन्द सरस्वती) पृष्ठ संख्या- २१९७, चारों भागों का मूल्य = १३००/-
डाक-व्यय सहित विशेष छूट पर उपलब्ध मूल्य = १०००/-

पुस्तकों हेतु सम्पर्क करें:- दूरभाष - 0145-2460120

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाताधारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर।**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

लेखकों से निवेदन

- लेखक कृपया अपने मौलिक व अप्रकाशित लेख ही भेजें।
- लेखक अपना पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या लेख के साथ अवश्य लिखें।
- परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।
- अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटायी नहीं जाती हैं।
- रचना के प्रकाशन में छः माह या अधिक समय भी लग सकता है, अतः कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।
- स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है।

-सम्पादक

जो विद्या की वृद्धि के लिए पठन-पाठन रूप यज्ञ कर्म्म करने वाला मनुष्य है वह अपने यज्ञ के अनुष्ठान से सब की पुष्टि तथा संतोष करने वाला होता है इससे ऐसा प्रयत्न सब मनुष्यों को करना उचित है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.२७

संस्था की ओर से....

क्या आप प्रतिदिन अतिथि यज्ञ नहीं कर पाते?
तो आइये, अतिथि यज्ञ के होता बनिये

वैदिक नित्यकर्मों में अतिथि यज्ञ प्रतिदिन करना अनिवार्य है, किन्तु आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं, फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय? इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें, इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन प्रतिवर्ष ५ हजार एक सौ रु. की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशित भी किये जाते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उन्हें उनके जन्मदिवस आदि पर परोपकारिणी सभा की ओर से दूरभाष द्वारा आशीर्वाद प्रदान किया जायेगा। यदि उस शुभ अवसर पर वे स्वयं उपस्थित होकर यजमान बनें तो यह सर्वोत्तम होगा।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

परोपकारिणी सभा की गतिविधियाँ

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित उनकी उत्तराधिकारिणी सभा है और केवल नाम से ही नहीं, बल्कि अपने कार्यों से भी वह ऋषि के उत्तराधिकार के दायित्व को पूर्णतया निभा रही है। महर्षि दयानन्द सरस्वती

ने इस सभा की स्थापना के समय तीन उद्देश्य रखे थे।

१. वेदादि सत्यशास्त्रों का प्रकाशन २. विद्वान् उपदेशक तैयार करके देश-विदेश में वैदिक धर्म का प्रचार एवं ३. आर्यावर्त्तीय दीन-दरिद्रों की सेवा।

इन सभी कार्यों को सभा अपने विभिन्न प्रकल्पों के माध्यम से पूरा करने में सर्वसामर्थ्य से लगी हुई है। यद्यपि सभा के पास आर्थिक आय का कोई स्थाई माध्यम नहीं है, पुनरपि ऋषिभक्तों एवं आर्यजनों के सहयोग और विश्वास पर ही सभा ने बड़े-बड़े कार्यों को प्रारम्भ किया और निरन्तर कर भी रही है। आचार्य डॉ. धर्मवीर जी, जो कि वर्तमान में परोपकारिणी सभा के प्रधान एवं मूल स्तम्भ थे, उनका कहना था कि **''कार्य यदि अच्छा है तो उसे प्रारम्भ कर देना चाहिये, सहयोग तो स्वयं ही मिल जाता है।''** यही शैली अपनाकर आज भी वैदिक विचार के प्रचार का कार्य निरन्तर जारी है। डॉ. धर्मवीर जी के जाने से सभा को बड़ा आघात अवश्य लगा है, परन्तु आर्यों का स्नेह, भरोसा उनके द्वारा प्रारम्भ किये गये कार्यों को रुकने नहीं देगा-ऐसा सभा को पूर्ण विश्वास है।

परोपकारिणी सभा आज अनेक कार्यों, माध्यमों से इस वेद प्रचार यज्ञ में लगी है, जिसकी सूची यहाँ दी जा रही है-

भव्य ऋषि उद्यान आश्रम, अतिथि यज्ञ, भोजनशाला, गौशाला, वानप्रस्थ एवं संन्यासाश्रम, गुरुकुल, परोपकारी पत्रिका, प्रकाशन, योग साधना एवं चरित्र निर्माण शिविर, सत्यार्थ प्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र का नि:शुल्क वितरण, पाण्डुलिपियों का डिजिटलाइजेशन, पुस्तकालय, औषधालय, देश-देशान्तरों में वेद-प्रचार, आयुर्वेदिक औषधालय।

गुरुकुल के लिये प्रवेश-सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान-अजमेर में वैदिक धर्म एवं आर्यसमाज के उपदेशक तैयार करने हेतु उपदेशक कक्षा में प्रवेश प्रारम्भ हैं।

प्रवेशार्थी की न्यूनतम आयु १४ वर्ष तथा कक्षा आठ या उससे अधिक उत्तीर्ण हो। आर्ष-पद्धति से संस्कृत व्याकरण, दर्शन, उपनिषद्, वक्तृत्व कला तथा महर्षि निर्दिष्ट पाठ्यक्रम के अध्यापन की व्यवस्था है।

गुरुकुल में अध्यापन, भोजन एवं आवास **नि:शुल्क** है।

प्रवेश के इच्छुक अभ्यर्थी सम्पर्क करें-

आचार्य, आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, पुष्कर रोड, अजमेर।

दूरभाष- ०८८२४१४७०७४, ०१४५-२४६०१६४, ०१४५-२६२१२७०

परोपकारिणी सभा के प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

दानदाताओं की सूची

अतिथि यज्ञ के होता

(१५ अप्रैल से ३१ मई २०२१ तक)

१. श्री प्रकाश किशोर खन्ना, अजमेर २. श्रीमती निर्मला मेहरा, अजमेर ३. श्रीमती शकुन्तला खन्ना, अजमेर ४. श्रीमती सीमा खन्ना, अजमेर ५. श्री गौरव मिश्रा, अजमेर ६. श्री योगांश व सुश्री प्रियल गर्ग, सिरसा ७. श्रीमती ज्योत्स्ना 'धर्मवीर', अजमेर ८. डॉ. बद्रीप्रसाद पञ्चोली, अजमेर ९. स्वामी आशुतोष परिव्राजक, अजमेर १०. मास्टर ईश्वरसिंह, रोहतक ११. श्री सुरेन्द्र मोहन विकल, लुधियाना १२. श्री रामवीर चुघ, पञ्चकुला १३. इंजी. श्री करणसिंह, मुजफ्फरनगर १४. श्री गणपतलाल एवं श्रीमती शिवकान्ता तापड़िया, कोटा।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गोशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में निःशुल्क किया जाता है। आप सभी गो-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गोशाला के दानदाता

(१५ अप्रैल से ३१ मई २०२१ तक)

१. डॉ. बद्रीप्रसाद पञ्चोली, अजमेर २. श्री दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव, लखनऊ ३. श्री संजय गुप्ता, यू.एस.ए., ४. श्री रामवीर चुघ, पञ्चकुला ५. श्री ऋषभ गुप्ता, अम्बाला कैन्ट ६. श्री माणकचन्द जैन, छोटी खाटु।

अन्य प्रकल्पों हेतु सहयोग राशि

१. स्वामी योगेश्वरानन्द, हरिद्वार २. श्री एस. के. तलवार, जालन्धर ३. श्री ज्ञानप्रकाश छापरवाल, राजगढ़ ४. स्वामी आशुतोष परिव्राजक, अजमेर ३. श्री पूरनचन्द सिंघल, जयपुर ४. श्रीमती प्रेमलता गोसाईं, फरीदाबाद ५. श्री गौरीशंकर अग्रवाल, नईदिल्ली ६. श्री सुमेरसिंह, पलवल ७. श्री सुशील कुमार गुप्ता, बुलन्दशहर ८. श्री प्रेमचन्द शास्त्री, पञ्चकुला ९. श्री विजय शेरेकर, पुणे १०. श्री ऋषभ गुप्ता, अम्बाला कैन्ट ११. श्री चन्द्रसेन हरिसिंघानी, अहमदाबाद १२. श्री पंकज दीवान, नई दिल्ली।

विद्या की प्रगति कैसे?

वर्णोच्चारण, व्यवहार की बुद्धि, पुरुषार्थ, धार्मिक विद्वानों का संग, विषय कथा-प्रसंग का त्याग, सुविचार से व्याख्या आदि शब्द, अर्थ और सम्बन्धों को यथावत् जानकर उत्तम क्रिया करके सर्वथा साक्षात् करता जाय। जिस-जिस विद्या के कारण जो-जो साधनरूप सत्यग्रन्थ है उन उनको पढ़कर वेदादि पढ़ने के योग्य ग्रन्थों के अर्थों को जानना आदि कर्म शीघ्र विद्वान् होने के साधन हैं।

(व्यवहार भानु)

'सत्यार्थ प्रकाश' एवं 'महर्षि दयानन्द जीवन-चरित्र' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति

महर्षि दयानन्द सरस्वती का अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' आर्यों का ब्रह्मास्त्र है। ऐसा ब्रह्मास्त्र, जिसने अविवेक, पाखण्ड, अन्धविश्वासों का दमन कर समाज में एक नई क्रान्ति 'वैचारिक क्रान्ति' को जन्म दिया। अन्धश्रद्धा, अविवेक और पाखण्ड मानव समाज में सहज ही पनपने वाली समस्या है, इसलिये प्रत्येक काल, प्रत्येक स्थान और प्रत्येक परिस्थिति में इन समस्याओं के उन्मूलन की आवश्यकता है-अत: 'सत्यार्थ प्रकाश' की आवश्यकता भी सदैव ही अनिवार्य रहेगी, परन्तु यह विचार जन-जन तक पहुँचे, तो ही लाभकारी होगा। इसी को ध्यान में रखते हुए परोपकारिणी सभा ने ७ वर्ष पूर्व 'विश्व पुस्तक मेला' दिल्ली में प्रतिवर्ष 'सत्यार्थप्रकाश' के साथ 'महर्षि का जीवन-चरित्र' एवं 'आर्याभिविनय' पुस्तक का नि:शुल्क वितरण करने की योजना बनाई, जो निरन्तर चल रही है। इस कार्य के परिणाम भी बहुत सुखद रूप में सामने आये हैं। पुस्तक में कई व्यक्ति आकर कहते हैं कि हमारे पास यह पुस्तक है, हम पिछले वर्ष ले गये थे।

प्रत्येक आर्यमात्र की यह इच्छा होगी कि वह भी इस ग्रन्थ को वितरित कर पुण्य का भागी बने। इसके लिये सभा प्रत्येक आर्य को इस महायज्ञ में सम्मिलित करना चाहती है। प्रत्येक व्यक्ति यज्ञ में अपनी आहुति दे तो यज्ञ और अधिक भव्य एवं विस्तृत हो जाता है। 'सत्यार्थप्रकाश' 'महर्षि दयानन्द जीवन-चरित्र' के नि:शुल्क वितरण रूपी यज्ञ में अपनी आहुति देने के लिये आप अपने सामर्थ्यानुसार सहयोग दे सकते हैं। परोपकारिणी सभा की ओर से ये पुस्तकें बड़े अक्षरों में, बढ़िया कागज पर, सजिल्द छापी जाती हैं, जिससे नये व्यक्ति के लिये भी पुस्तक संग्रहणीय बन जाती है। एक सैट की छपाई का खर्च लगभग १५० रु. आता है। **यदि कोई व्यक्ति अपनी सात्त्विक भावना से केवल २० पुस्तकें (इससे अधिक कितनी भी) ही वितरित करवाना चाहता है, तो सभा उतनी प्रतियों पर दानी व्यक्ति का नाम छपवाकर वितरित करेगी। इसी प्रकार ३०, ५०, १००, १००० आदि।**

१५० रु. प्रति के अनुसार आप दान देकर अपनी ओर से, अपने नाम से पुस्तक वितरित करा सकते हैं। आहुतियाँ जितनी अधिक होंगी, यज्ञ का फल भी उतना ही अधिक होगा।

अपने दान के साथ 'सत्यार्थप्रकाश वितरण' अवश्य लिख देवें, और साथ ही अपना नाम एवं पता भी। यह दान आप परोपकारिणी सभा के खाते में ऑनलाइन, चैक द्वारा या फिर परोपकारिणी सभा के पते पर मनिऑर्डर भी कर सकते हैं। यह यज्ञ आपका है, प्रत्येक आर्य का है। अत: प्रत्येक आर्य इसमें अपनी आहुति अवश्य दे।

न्यूनतम	२० प्रतियाँ	३०००/- रु.
	३० प्रतियाँ	४५००/- रु.
	५० प्रतियाँ	७५००/- रु.
	१०० प्रतियाँ	१५०००/- रु.
	५०० प्रतियाँ	७५०००/- रु.
	१००० प्रतियाँ	१,५०,०००/- रु.

इस प्रकार जितनी अधिक प्रतियाँ बाँटना चाहें, उतनी और दूरभाष संख्या के साथ भेज देवें। दान अक्टूबर माह के अन्त तक भिजवा देवें, ताकि प्रतियों की संख्या निर्धारित करके उन पर दानदाताओं का नाम अंकित किया जा सके। धन्यवाद।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं वैसे ही जगदीश्वर सबको उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४